भक्तके भगवान् ।

[प्रथम भाग]

लेखक

श्री० रलियारामजी कश्यप,
एम्. एस्सी.

प्रकाशक
श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
स्वाध्याय-मंडल, औन्ध, (जि० सातारा)

संवत् १९९४, सन् १९३८

मूल्य ८ आने

भक्तके भगवान् ।

[प्रथम भाग]

लेखक

श्री० का[illegible]रामजी कश्यप,

एम्. एस् सी.

प्रकाशक

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

स्वाध्याय-मंडल, औन्ध, (जि० सातारा)

सम्वत् १९३७

मूल्य ८ आने

मुद्रक
श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
भारत-मुद्रणालय, औन्ध, (जि० सातारा.)

भूमिका ।

भगवद् विषयक सिद्धांतोंपर वाद विवाद करते करते झगड़ पड़ना विज्ञान के सर्वथा विरुद्ध है। यथा अद्वैत (वेदान्त), द्वैत, बहुदेवतावाद, आदि में से एकको सच्चा दूसरे को झुठा ठहरानेका यत्न भी असंगत है। द्रष्टा के लिये तो भगवान् की दर्शन प्रत्येक पदार्थ में ही सम्भव है। और पदार्थ मात्र का उचित प्रयोग तथा उपभोगही उन पदार्थोंमें विद्यमान भगवान् की सच्ची पूजा है। बात है भी सच्ची कि अन्त में तो सभी प्रकार के आस्तिकों के मत में भगवान् ने ही सृष्टि रची है फिर इस बात का क्या झगड़ा रहा कि उसने अपने आप को ही जगत् का आकार दे दिया अथवा किसी और भिन्न ही कारण से जगत् बना, स्वयं इसमें प्रविष्ट हो उस के कोने कोने में व्याप गया। जब तक कोई यह मानता हो कि उस भगवान् ने संसार रचा और अब वह सर्वथा उस में व्याप रहा है तब तक यह सर्वथा साधारण प्रश्न रह जाता है कि वह स्वयं जगदाकार हो गया अथवा नहीं। क्योंकि यदि जगत् का कारण उस भगवान्से सर्वथा पृथक् प्रकृतिरूपी कोई हो तो भी वह कारण उस भगवान् की अपेक्षा इतना तुच्छातितुच्छ होगा कि द्रष्टा ऋषि सर्वथा उसको न के बराबर समझ सकने में पूरा स्वायत्त होगा; क्योंकि क्या यह विश्व या इसका प्रकृतिरूपी पृथक् कारण उस भगवान् की आज्ञा से एक इञ्च भी इधर उधर हो सकता है? अथवा उसके विरुद्ध कदापि जा सकता है? वह भगवान् तो सर्वशक्तिमान् सर्ववशी हैं तो फिर सीधी

प्रकार से ही उन्हें क्यों न सर्व समर्थ सर्व ही मान लिया जावे और सर्वथाही उसके वशीभूत हो जाया जावे और अपने सम्पूर्ण कर्म, विचार और सम्पत्ति आदि सर्वस्वही इसीके अर्पण कर छोडी जावे। क्योंकि उस दशा में, यदि वे भगवान् वास्तव में विद्यमान है, जैसा कि प्रत्येक आस्तिक को सदा माननाही पडता है, वे अवश्य अपने ऐसे भक्तका उतना ध्यान रखेंगे ही जितना कि सम्भवतया वह कभी किसी का रख सकते हैं।

इस लिये इन कति पृष्ठों में हम केवल मनुष्य के भागवत चमत्कारों का ही वैज्ञानिक सत्यता से विस्तृत वर्णन करनेका यत्न करेंगे, जैसे चमत्कार विविध व्यक्ति दिखावे या जीवन-निर्वाहवृत्ति-प्राप्ति-निमित्त नहीं दर्शाते, परन्तु तभी उन से वह दिखा ही जाते हैं जब परिस्थिति उन को ऐसा करनेपर सर्वथा विवश कर दे।

आशा है कि इस पुस्तक के पाठ से भगवान् की प्राप्ति की उमंग भक्त के हृदयों में उमड पडेगी।

भगवान् का भक्त,

रुलियाराम कश्यप

भक्तके भगवान् ।

पहिली झांकी ।

ओ३म् ॥ [परमात्माकी प्राप्तिकी विद्याको परा विद्या कहा जाता है । उसका स्वरूप इस लेखमें दर्शाया जाता है ।] सबसे प्रथम प्रश्न यह है कि क्या पहिचान है कि परमात्म देव मिल गये हैं ? उत्तर यह है कि समय पडनेपर मनुष्य अपने में हर एक सिद्धि विद्यमान पाता है, यही सबसे मोटी पहिचान इस बात की है कि उस मनुष्य का किसी सार्वभौम सत्ता से संबंध हो गया है । जब मनुष्य की क्रिया सर्वथा उसकी मानुषी शक्ति से भिन्न अलौकिक होती है, तो मानना पडता है कि यह कार्य इस मनुष्य का नहीं वरंच उस परमात्मा का है जिस से इस का सम्बन्ध जुड चुका है ।

प्रश्न- आप मानुषी शक्तिसे भिन्न अलौकिक किन क्रियाओं को कहते हैं ? उदाहरण देकर समझायें ।

उत्तर- सुनिए ।

(१) कोई व्यक्ति मरने की दशा में पडी हुई प्रतीत हो रही है, उस के सम्बन्धी रो रहे हैं । ऐसी दशा में कोई अनाडी

भक्त उस के मुख पर प्रेम से हाथ फेर फेर कर उस में इतना फर्क ला देता है कि वह होशमें आ जाती है और पीछे से बडी उमर पाती है। उस पुरुष की शक्ति से सर्वथा बढ चढ कर एक अनाडी के हाथ से जो यह एक महा वैद्य अथवा सिद्धका कार्य हुआ इस को मैं मानुषी क्रिया समझता हूं। अवश्य उस समय उस मनुष्य के द्वारा परमात्माने सहायता दी। अवश्य उस मनुष्य को उस समय परमात्मा मिला हुआ था।

(२) किसी की लडकी की शादी थी, मकान नया बनाया था। बेसरोसामानी की हालत थी। आंगनका level नीचा था, पानीका बहाव उसी ओर था। ऐसी दशामें एक अनाडी ने कह दिया "पानीके लिये बन्द आदि लगाते मत फिरो, पानी नहीं पडेगा।" दोचार दिन पीछे फिर वही बन्द लगता देख उसने फिर वही बात दुहरा दी। कालान्तर में विवाहका समय आया, खूब घटाटोप छा गया, सर्दी हवा बादल बिजुलीका तांता बंध गया, अचानक भक्त का ध्यान सांसारिक बातों में ऐसा उलझा कि वह अपना प्रण भूल गया। जब बातें बन्द हुईं तो उसने पानी की बूंदों की टपटप सुनी। झट उसके मुंहसे निकला "हैं, पानी पडता है" तुरन्त पानी बंद हो गया। प्रातःकाल पता लगा कि शादी के लिये बिछाये गये दरयां शामयाने आदि तक भी पानी ने खराब नहीं किये। शादी पानीसे सर्वथा निर्विघ्न समाप्त हुई। अनाडी भक्त केवल 'यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि' वा 'कुरु' कुछ ऐसा पद जपता रहा था।

अब मनुष्य की शक्ति से यह सर्वथा बाहर है कि वह

मेंहपर आधिपत्य दिखा सके। उपरोक्त उदाहरणमें मेंह सर्वथा भक्त की इच्छानुकूल रहा। इस से साफ जाहिर है कि भक्त के द्वारा उस समय परमात्मा काम कर रहे थे, अर्थात् उस समय भक्त को भगवान् इन्द्र अवश्य मिले हुए थे।

(३) एक सुस्त दिमागवाला लडका निद्रा तथा क्षुधाके अत्यन्त मांद्य के कारण प्रायः विक्षिप्त सा हो गया। दिनरात अपने पिताके सङ्ग इस प्रकार छायाकी भांति रहता कि उसने सोना तथा दफ्तर में काम करना बहुत कठिन कर दिया और स्वयं भी 'आग लगी है' इत्यादि बकवास कर कर के दिनरात बहुत दुःखी होता रहा। डाक्टर, वैद्य बडों बडों का इलाज किया। कुछ बनता नजर न आया। अचानक अनाडी भक्त ने कहा "घृत पिलाओ, अच्छा हो जाएगा।" ३५ दिन घी पिलाने पर उस की क्षुधा तथा निद्रा खूब बढ कर वह जैसा बीमारीसे पहिले था, वैसा तन्दुरुस्त हो गया। फिर कई कहने लगे कि यह तो चन्द्रमा के शुक्ल कृष्ण पक्षोंके दिनों के हेर फेर से बीमार तथा राजी हुआ था। परन्तु भक्त को निःशङ्क यश देना भगवान् को वाञ्छित था। वह नव युवक दो मास पीछे फिर उस रोग से आक्रमित हुआ, फिर डाक्टर का इलाज हुआ, तकलीफ जोरोंपर हो गई, फिर भक्तकी सलाहसे घी पिलाया गया, दो तीन दिनमें ही प्रभाव हुआ। त्रिफला एक आध दिन देकर भक्तने फिर नवयुवकको नीरोग कर दिया।

अब विचार करें कि अनाडी भक्त कोई महा वैद्य तो था ही नहीं, जो उन्माद रोगीकी चिकित्सा कर सका। यह उसकी मानुषी शक्ति से सर्वथा बाहर था। साफ जाहिर है कि यह परमात्मानेही उस

भक्त के द्वारा कार्य किया था अर्थात् उस समय उसको परमात्मा अवश्य मिला हुआ था ।

(४) एक सौदा दो सज्जनों ने मिलकर किया । उन्होंने एक कोठा अनाज का खरीदा । कालांतर में अनाज सस्ता हो गया । कोठे के व्यापार में नुकसान नजर आने लगा, तो सांझियों में झगडा होने लगा । एक कहने लगा कि इसमें मेरा हिस्सा नहीं था । दूसरा कहने लगा कि जरूर था । झगडा बढने लगा । अनाडी भक्तने विचारा कि यह आपस में सम्बन्धी भी हैं, झगडा बढने पर बदनामी बहुत होगी । उसने कहा, " अच्छा जो हिस्सा इनकारी का है, वह मेरा सही । " इनकारीने कहा " अपने पिता से पूछ लो, वह यह न कहे कि मेरे बेटे को फंसा लिया । " भक्तने उत्तर दिया, " जब यह हिस्सा मेरा हो जायगा, तो इसमें नुकसान होगा ही नहीं । " खैर । फैसला हो गया । हिस्सा उस दिन से अनाडी भक्त का हो गया । कालांतरमें अनाज महंगा हो गया, कोठा बेच दिया गया, अनाडी भक्त को ७० या ७५ रुपये या कुछ ऐसी रकम उसके नफे के हिस्से की आई । उस के पिताजीने उसे कहा कि " लो, यह तुम्हारी पहिली कमाई है । "

अब सोचनेकी बात यह है कि भक्त कोई ज्योतिषि नहीं था और नहीं इतना बडा भारी या पक्का व्यापारी ही था, जो ऐसा विलक्षण व्यापार कर सकता । पर साफ है कि यह भक्तकी मानुषी शक्तिसे सर्वथा भिन्न कार्य था, अत: परमात्मा का यह अपना कार्य था अर्थात् उस समय उसको परमात्मा अवश्य मिला हुआ था ।

अब प्रश्न उठता है कि परमात्मा प्राप्त होता कैसे हैं ? उत्तर है कि प्रणव-जापसे । यथा एक मनुष्यको बहुत आसानीसे जाप

सिद्ध हो गया, न जाने उस पर परमात्माकी विशेष कृपा थी अथवा उसके पूर्व जन्मोंके संस्कार ही इतने अधिक उन्नत थे। उसकी कथा इस प्रकार है कि एक गुरुने उसके पिता, भ्राता, भौजाई आदिको माला पोथी नाम आदि दान करके उन्हें अपना शिष्य बनाया, पर उसके कहनेपर भी उसे अपना शिष्य बनानेसे इनकार कर दिया। यद्यपि पहिले उसके बहुत आग्रह करने पर उसको पुस्तक तो दे दी थी, पर नाम दान देनेसे, अपना शिष्य बनानेसे, न जाने क्यों, उसके बहुत आग्रह करनेपर भी इनकार ही कर दिया। उस मनुष्यने अपने भाईसे पूछा तो उसने बताया कि ३-४ दिन तो हर समय जब भी चित्त खाली हो तो जाप गुरुके उपदेशानुसार अपने आप होने लग जाता था, फिर उनके अपने कामकाजमें उलझ जानेसे वह होनेसे हट जाता। उस मनुष्यने समझा कि राम राम जाप बताया होगा। वह आर्यसमाजी था, वह ओ३म् ओ३म् रद्दी कागजके पुरजोंपर लिखकर उन पुरजोंके भर जानेपर उनको फाडकर फेक देता। इस प्रकार जब दफ्तर में उसे विशेष कार्य न होता तो वहीं दफ्तर में बैठा बैठा वह उसी प्रकार रद्दी कागजोंको ओ३म् ओ३म् से भरकर फाडकर फैंक दिया करता।

उसका सिक्ख दरबान तथा मुसलमान खजांची भक्तिके कारण उसे रोकते कि फाडकर फेकनेसे रब्बका नाम पांओतले आता है, उसका निरादर होता है। इस कारण मुंहमें ही जाप कर लिया करें, परन्तु उसे समझ न पडी यहां तक कि एक दिन एक मुसलमान भक्तके अल्लाके नामवाले कागजका असर एक जबरदस्त बीमारी के दूर करनेमें देखकर उसे भी विचार आया कि जब इसके अल्ला

के नामवाले कागजमें इतनी शक्ति है तो अवश्य मेरी गलती है जो ओ३म्वाले कागज फाड फैंकता हूं। बस, उस दिनसे वह मनुष्य मनमें ओ३म् ओ३म् करने लग गया, कागजपर ओ३म् लिख उसे फाड फैंकने की आदत उसने छोड दी। कुछ ही काल पीछे उसे पता लगा कि उसका जाप सिद्ध हो गया है, क्योंकि उसके चलते समय टांगोंमें ओ३म् ओ३म् होने लग गया और मेंह उसकी इच्छानुसार कई बार पडा और कई बार उसका 'हुक्म चलता' देखा गया।

प्रश्न— 'हुक्म चलना' आप किसे कहते हैं? एक तो उदाहरण इसका भी दीजिये।

उत्तर— 'हुक्म चलने' से यह अभिप्राय है कि जो वह कहता है हो जाता है, जैसे उपरोक्त मनुष्य का एक जमीनके सौदे में हिस्सा था। बाकी सांझी जमीन बेचना चाहते थे। बहुत इश्तिहार आदि अखबारोंमें दिये गये, एक ग्राहक खडा हो गया। १२०००) देता था। सांझी झट लेनेपर राजी हो गये। उस मनुष्यने कहा १२८००) लूंगा। साथी नाराज हुए पर वह न माना, दलाल लौटा दिया गया। दो घंटे के लगभग बीत गये दलाल फिर आया कि सवा बारह लेलो। साथी उस मनुष्य से बहुत झगडेपर वह फिर भी न माना। तीसरी बार साढे बारहकी (offer) आफर लेकर दलाल फिर आया। उस मनुष्यने फिर नकार दी। सूर्यास्तके कुछ ही देर पीछे वही दलाल १२८०० पर सौदा पक्का करनेके लिए ३००) रुपयेका चैक देकर एक आनेके टिकटवाली रसीद सौदा पक्का करनेकी उन सांझियोंसे लेकर बिदा हुआ। कि १५ जनवरी तक रजिस्टरी करवानी होगी।

बस, साफ ज़ाहिर है कि भक्तकी जबानसे परमात्माका हुक्म निकला, जो प्रातः सायंके अन्तरमें ही ८००) रुपयेका फरक होते हुए भी चलकेही रहा। इसको "हुक्म चलना" कहते हैं।

इसी प्रकार जिस भक्त के हृदयकी धडकनके साथ साथ राम राम या ओ३म् ओ३म् आदि परमात्माके नामका जाप हो उसकी बाबत कहा जाता है कि इसका "दिल बोलता" है।

इसी उदाहरणसे प्रतीत होता है कि कोई एक बडी कापी बनाकर उसपर खूब बारीक ओ३म् ओ३म् जब समय मिले तभी लिखते रहना और उस कापीको आदरसे सम्भालकर रखना बहुत आसान तरीका जाप सिद्ध करनेका है।

उपरोक्त जो उदाहरण दिये गये हैं, और जो प्रणव-जापसिद्धिका प्रकार विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है, वह प्रत्यक्ष सिद्ध है। अर्थात् किसी न किसी के तजरुबेमें आई हुई सोलह आने सच्ची घटनाएं हैं। अब अनुमान तथा शब्दप्रमाणके आश्रित परमात्मप्राप्तिका साधन लिखा जाता है।

परमात्माको प्राप्त करनेके लिए 'ओ३म्' का जाप अर्थसहित करना होता है। अर्थात् वाणी ओ३म् ओ३म् जपे तो हृदय उस द्रव्यका अनुभव करे, जिस आत्मद्रव्यका नाम ओ३म् अथवा परमात्मा है। यह बात लिख तो दी गयी, परंतु समझनी कठिन है और करनी और भी कठिन है। इस कारण इसका प्रकार मेरी बुद्धिमें यह आया है, कि क्योंकि परमात्माकी विशेषता आनन्द है, इस कारण ऊपर लिखे सार्थ जपका सहल उपाय यही है कि भक्त आनन्द में भरकर अपनी हृदय की धडकन के रूपमें ओ३म् जपे। यह किया इस प्रकार जाता है कि मनुष्य अपना ख्याल

दिलकी धडकन सुननेको दौडाता है, तो उसे दिल धँडकता सुनाई देता है और साथ साथ उसके जब वह चाहे तब ओ३म् ओ३म् होने लग जाता है और होता हुआ सुनाई भी देता है ।

इस अवस्था में जो मनुष्य पहुंचा हुआ है, उसको इच्छामात्रसे यह सिद्धि प्राप्त होती है कि यदि वह चलता चलता ओ३म् जपना चाहे तो उसे टांगों में ओ३म् का जाप होता प्रतीत होगा । खाते समय मुंह में, बोलते समय कण्ठ में, यहांतक कि स्त्रीसङ्ग करते समय भी ओङ्कारका जाप होता प्रतीत होगा । परन्तु यह बात साफ है कि जाप से उस की यह सब क्रियायें सुस्त धीमी मध्यम रुकी हुई होती जांयगी, यहां तक कि स्त्रीसङ्गके समय यदि जाप आरम्भ हो जायगा तो भोग वहीं रुक जायगा । चाहे स्त्री कितनी भी उत्तेजित हो, तडपती हो, उस की इच्छा तभी पूरी होगी जब भक्त जाप छोड उस की इच्छा पूरी करने का विचार करेगा । अर्थात् ऐसे भक्त के वश में काम होता है । काम उस के जापको नहीं रोक सकता, स्त्री उस के भक्तिमार्ग में रुकावट नहीं बन सकती ।

प्रश्न होता है कि ऐसा हार्दिक जाप कैसे प्राप्त होता है ? कैसे सिद्ध किया जा सकता है ? उत्तर यह है कि इसके लिये यत्न करना होता है । सब से पहिले हृदयमें प्रबल इच्छा हो, निश्चय हो कि परमात्मा दुनिया की सब वस्तुओं से अधिक प्यारी वस्तु है । चाहे संसार पागलही बना डाले मैं तो पहिले परमात्मा को मिलना चाहता हूं । चाहे दुनियामें मेरा सब कुछ स्वाहा हो जाय, मुझे पुत्र मरने का शोक नहीं, क्योंकि भगवान् से मुझे पुत्र अधिक प्यारे थे । भगवान् के और मेरे मध्यमें थे इस कारण भगवान् ने

मुझे यह दण्ड दिया, कि क्योंकि तुम अपने पुत्रों को मुझसे अधिक प्रिय समझते थे। इस कारण मैंने वह तुमसे छीन लिये कि तुम्हें पता चले कि पुत्र वही जी सकता है जो मेरा दिया हुआ हो। स्त्रीके प्राण छूटने का मुझे दुःख नहीं क्योंकि परमात्माकी अपेक्षा मैं स्त्री को अधिक प्यार करता था। इस कारण परमात्मा ने वह छीन ली कि मैं समझूं कि परमात्मा की दी हुई स्त्री ही आयुष्मान् बन सकती है। धन यश आदि जानेका मुझे शोक नहीं क्योंकि मैं परमात्मा की अपेक्षा इन से अधिक प्यार करता था। परम देवने मुझे अपनी ओर खींचनेके लिये धन यश मुझसे छीन लिये। इस प्रकार महादुःख पडनेपर भी जो परमात्मा का भक्त प्रसन्न होता है कि परमात्मा से प्रेम करने में जो विघ्न थे वह परमात्मा ने दूर कर दिये और जो स्त्री कन्या व्यापार आदि परमात्मा ने दिये हैं उन को परमात्मा की देन समझकर उन में इतना नहीं उलझता कि परमात्मा की ओर जो उस का धर्म है उस में विघ्न हो, और जो सदा यह चाहे कि परमात्मा को किसी न किसी प्रकार अवश्य पा लेना चाहिये। उस पुरुषकी बाबत कहा जा सकता है कि वह मुमुक्षु है! इस को प्रबल इच्छा है। ऐसी इच्छा-वाला परमात्मा को कालान्तर में अवश्य पा लेता है। हार्दिक सार्थ प्रणवजाप उस को, अवश्य प्राप्त हो जाता है।

प्रश्न- कैसे प्राप्त होता है? उत्तर है "इस विधि से"। वह ऊंचे ऊंचे ओ३म् ओ३म् बोले गाये स्वरसहित गाये। शनैः शनैः उसका ध्यान उसी में लग जायगा। बाजा बांसुरी सितार आदि-सहित गाना बजाना चाहे तो आरम्भ में जब तक उसको जी लगना कठिन प्रतीत होता हो तब तक निस्सन्देह इन की सहा-यता ले लेवे, पर जल्दी जल्दी इन को छोडने का यत्न करे। इनकी

आदत न डाल लेवे, क्योंकि असल में तो कान इन यन्त्रों की मधुर ध्वनि में ही फंसा होता है और मनुष्य समझता है कि मैं भक्ति के राग में मस्त हूं। यह उसकी भूलही हो जाती है। इस कारण यन्त्रों की सहायता के विना स्वरसहित ऊंचे ऊंचे ओ३म् ओ३म् गाये। यह उद्गीथ जाप है। उपनिषदों में इसकी बडी महिमा वर्णित है। परन्तु यह पहिली पौडी है। महर्षि सनत्कुमार ने नारद शिष्य को जो नाम उपासना बतलाई है वह यही है; परंतु ऊंचे ऊंचे ओ३म् जपने से लेकर हार्दिक जापतक सबही नाम-उपासना है। ज्यों ज्यों ध्यान ओंकार में लगने लगे त्यों त्यों जाप को नीचा करता जावे, ध्वनि मन्द करता जावे। कालान्तर में ऐसा जाप करे कि मन ही मन में होने लग जावे। ऐसा मानसिक जाप होने के पीछे हार्दिक जाप की बारी आती है। आनन्दित होकर हार्दिक जाप करे। परमात्मा अवश्य मिल जायगा।

अब प्रश्न होता है, कि जब परमात्मा इन सरल उपायोंसे मिल सकता है, तो हमारे महामान्य पूर्वज महर्षियोंने इतने बडे आडम्बरवाले यज्ञों तथा सन्ध्याहवनादि को गृहस्थियों के लिए कर्तव्य क्यों ठहराया? उत्तर यह है, कि गृहस्थियों का चित्त सांसारिक पदार्थोंके मोहजाल में इतना फंसा रहता है कि उनका ध्यान आसानी से परमात्मा की ओर जाता ही नहीं। उनको परमात्मा का ध्यान करवाने के लिये इन महायज्ञों संध्या हवनादि का विधान किया गया है। जैसे स्नान करते समय जब ठण्डा पानी देहपर पडता है तो गृहस्थियों के मुख से सर्दी के मारे झट रामराम, हरि ओ३म्, ओ३म् तत्सत्, इत्यादि शब्द स्वतः ही, बलपूर्वक, अभ्यासवश निकल जाते हैं, बस इसी का आश्रय

लेकर विधान कर दियां गया कि स्नान करके सन्ध्या किया करो। ताकि स्नान से जो ध्यान परमात्मा की ओर आकर्षित हो गया है, उसी का आश्रय लेकर चित्त को परमात्मा में घडी दो घडी लगाया रखा जा सके।

इसी प्रकार गृहस्थिजन आग चूल्हे में जलाने के विना निर्वाह नहीं कर सकते। खाना बनाने के लिए या सर्दीसे बचने के लिये तो प्रत्येक घर में आग प्राय: नित्य जलती ही है। भोजन बनाते समय स्वतः ही कुछ न कुछ अन्नभाग आग में जल ही जाता है, या दूध या घी अधिक आंच लगने से उबल कर, या वैसे ही कभी न कभी जल ही जाता है, तो गृहस्थी का दिल चीज का नुकसान होनेसे दुःख मानता है और परमात्मा याद आता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि स्त्रियें खाना बनाना आरम्भ करते ही पहिले आगमें आहुति वा बलि डाल देती हैं। रोटीका टुकडा घी चीनी लगाकर आग में डाल देती हैं फिर बाकी रोटी बनाती हैं। इसी स्वाभाविक वार्ता से हृदय परमात्मा की ओर आकर्षित होता हुआ देखकर यह विधान हो गया कि बलि वैश्वदेव अग्नि-होत्र आदि यज्ञ करने चाहिये। ताकि परमात्मा की ओर खींचा हुआ चित्त घडी दो घडी उधर ही आकर्षित रहे।

इसी प्रकार पुत्र उत्पन्न होते समय जो अत्यन्त दुःख माता को होता है उस समय सब दायी आदि को परमात्मा याद आया हुआ होता है, उसी परमात्मा की ओर ध्यान आकर्षित होनेका यह लाभ ऋषियों ने अनुभव किया कि इस समय जात-कर्म-संस्कार रख दिया, ताकि उस दिनभर परमात्मा की ओर सबका ध्यान लगा रहे। इसी प्रकार बच्चेके पहिली बार बाल काटने पर

वह नाई के उस्तरे आदि से बहुत डरता है । रोता चिल्लाता है, मां बाप खुशभी होते हैं और बच्चे की घबराहट से घबराते भी हैं । ऐसे समय परमात्मा याद आता है इस से यह लाभ उठाया गया कि मुंडनसंस्कार रख दिया कि दिनभर पडोसियों तक को भी परमात्मा का ध्यान बना रहे । विवाह क्योंकि दो युवायुवतियों के आयुभर दुःख सुख सांझा निबाहनेका प्रण है । बच्चे पैदा करने आदि बडे बडे मुश्किल कामोंका आरम्भ है । यह अत्यन्त महत्त्व का दिन है । बहुत खुशी सब को होती है कि एक के दो बनेंगे और कन्यापक्षवालों को उदासी भी होती है कि आयुभरके लिये पुत्री जो इतने वर्षसे पाली पोसी गई है, आज से पराई हो जायगी । इस सब गडबड में सब के हृदय में बहुत उथल पुथल होती है । परमात्मा स्वत: ही सबको याद आया होता है । ऋषियों ने इसीसे यह लाभ उठाया कि इसे ही एक संस्कार बना दिया कि कई दिनतक परमात्मा की ओर सब का ध्यान आकर्षित रहे ।

इस कारण कृपालु भगवद्भक्त महर्षियोंने अपनी दिव्यबुद्धियों के द्वारा संसार की मोहमाया में अत्यन्त फंसे हुए गृहस्थिजनो पर परम कृपा करके इन संध्या अग्निहोत्रसंस्कार आदिकों के विधान कर दिए, जिनके मन्त्र भगवान् परमात्मदेवने स्वयंही वेदों में सृष्टि के आरम्भ में ही मनुष्यमात्र के लिए दान कर दिए थे । इस से अतिरिक्त परमात्माने वेद में मन्त्र ऐसे ऐसे भी रख दिए जिन के सत्य प्रयोगके द्वारा गृहस्थि धन अन्न यश बल निरोगता आयु आदि की प्राप्ति कर सके । इस कारण वेद यज्ञ-संस्कार आदि मनुष्योंके सुखके लिए उनको परमात्मा की ओर ले जाने के लिए ही रचे गए हैं क्योंकि गृहस्थि का पुत्र कलत्र धन

मान आदि में फंसा हुआ मन परमात्मा की ओर ले जाना एक बडा दुष्कर कार्य है ।

अस्तु ! जो जन सांसारिक पदार्थों से विरक्त हैं उन को चाहे वह किसी भी आश्रम में हों वहीं से संन्यास ले सकने का अधिकार ऋषियों ने दे रखा है। संन्यासी को दृष्टि है कि वह अपना सब समय ईश्वरभजन और परोपकार में बिता दे। अर्थात् सीधा जो उपाय हम ने सार्थ हार्दिक प्रणवजाप परमात्मा को पानेका बतलाया है उस से परमात्मा को पा लेवे । परोपकार उसका धर्म इस लिए साथ जोडा है कि यदि वह अपकार करेगा तो लोग उसके शत्रु हो जायंगे, उस को ईश्वरभजन करने के लिए अन्नपानादि निर्वाहार्थ न देकर उस की सहायता नहीं करेंगे अर्थात् ईश्वरभजन-सिद्धि के लिए उसका परोपकार-कर्तव्य ठहराया है। वास्तवमें इसमें भी स्वोपकार ही छुपा पडा है।

जो संन्यास के योग्य नहीं उस को संध्या आदि नित्य कर्म आवश्यक हैं। परन्तु उस में दर्जे रखे हुए हैं। जैसे अग्निहोत्र चार प्रकार के मनुष्य करते हैं। अध्वर्यु अर्थात् हवन के क्रिया भागके कर्ता जिसका कर्तव्य आहुतियां देने का है वह सबसे स्थूलबुद्धि पुरोहित है। दूसरा होता अर्थात् मन्त्रपाठकर्ता, वह ध्यान से मन्त्र पढता जायगा। यह हवनके वाणी भाग का वक्ता है। कर्म से वाणी अधिक शक्तिशालिनी होती है, इस का उचित प्रयोग कर्मकी अपेक्षा अधिक कठिन है। अतः होता अध्वर्यु की अपेक्षा सूक्ष्म बुद्धिवाला, मन्त्रों में श्रद्धावाला, परमात्मा के अधिक समीप होता है। तीसरा उद्गाता मन्त्रोंको गानेवाला, हवनके गीति-विभागका गायक जो यजमानकी इच्छानुकूल गा सकता हो उसके गानेके अनुकूल फल यजमानको मिल सकता है। ऐसे उद्गाताकी

बुद्धि बडी सूक्ष्म, वाणी बडी ऐश्वरीय तथा ध्यान बडा उन्नत होता है। यह अध्वर्यु तथा होता से अधिक ब्रह्मवेत्ता होता है। चौथा भगवदर्पित ब्रह्मा हवन की जान, अग्निहोत्रका प्राण, सर्वोत्तम हवनविभागका ध्याता, प्रणव जपनेवाला होता है, जो अग्निहोत्रकालमें भगवान् के मूर्तिमान् यज्ञ में ध्यान लगाए रहता है। कोई याजक वा पुरोहित अशुद्धि वा त्रुटि करे वह झट ओ३म् बोल देता है, याजक लोग अशुद्धि ठीक कर लेते हैं। इस प्रकार अग्निहोत्र कर्ताओंके चार दर्जे हैं। मनुष्य अपनी स्थितिके अनुकूल दर्जेके अनुसार अग्निहोत्रमें भाग लेवे तथा शनैः शनैः होता तथा अध्वर्युसे आरंभ कर ब्रह्माकी पदवी तक पहुंच जावे। एक विचार यह भी किया जा सकता है, कि क्योंकि मन्त्रोंका पाठमात्र शुद्ध उच्चारण जाननेवाले बच्चे भी कर सकते हैं पर हवनकी मन्त्रानुकूल क्रिया क्रियाकुशल विद्वान् ही कर सकते हैं। इस कारण होता पहिली श्रेणी है और अध्वर्यु दूसरी, इस विचार में भी कोई दोष नहीं। तात्पर्य यह है कि अपनी अपनी सामर्थ्य तथा योग्यतानुसार मनुष्य होता अध्वर्यु स्थिति से उठकर उद्गाता तथा ब्रह्मा बननेका यत्न करे।

इसी प्रकार संध्या स्तुति प्रार्थनोपासना में भी दर्जे हैं। पूरी संध्या साधारण गृहस्थियोंका मुख्य धर्म है, परन्तु ज्यों ज्यों उनका ध्यान जमता जाता है त्यों त्यों उनको संध्या बहुत लम्बी लगने लगती है, ध्यान जमानेके स्थानमें ध्यानको उखेडने लग जाती है, इसी कारण संध्याका जहां जहां वर्णन आता है वहां वहां लिखा है कि गायत्रीका जाप करे। प्रणव और महाव्याहृतियों सहित अर्थात् यह भाग संध्याका सार है। यदि इसमें 'विश्वानि देव...' और 'नमः शम्भवाय च ...' तथा 'आपो ज्योतिः...' और चारों

व्याहृतियां भी लगा दी जावें तो यह सुन्दर मन्त्रसमूह संध्या, अग्निहोत्र, स्तुतिप्रार्थनोपासना सब का सार बन जाता है, क्योंकि इसमें गायत्री तथा 'नमः शम्भवाय च' संध्याके 'आपो ज्योतिः' अग्निहोत्रका 'विश्वानि देव' प्रार्थनाका और सात व्याहृतियां, स्तुति तथा उपासनाका सार हैं और ओ३म् इन सबका परम सार है।

इस लिये जो गृहस्थी संध्या अग्निहोत्रादि करते करते ध्यानके कुछ कुछ जमनेके कारण इन क्रियाओंको बहुत लम्बा समझकर छोडनेको तय्यार हो जाते हैं उनको चाहिए कि वह उपरोक्त मन्त्रसमूहसे यह क्रियाएं कर लिया करें, इसीको सन्ध्या समझ संध्याकालमें पढा करें, अग्निहोत्र समझ इससे आहुति "स्वाहा" शब्द पीछे लगाकर दे दिया करें, इसीको ध्यानपूर्वक आनन्दमें भरकर परमात्मा का वर्णन समझकर खूब विचारा करें अर्थात् इसके विचारको स्तुतिप्रार्थनोपासना समझा करें। यह उन गृहस्थियोंके लिये है जो चिरकालसे संध्यादि क्रियाएं करते करते उनको लम्बी समझकर उकता कर छोडनेवाले हैं। कारण यह है कि उनकी मानसिक दशा कुछ उन्नत है, सूक्ष्म है, ध्यानमें वे कुछ उन्नत हो गये हैं और अगले दर्जे न जाननेके कारण फंसे हुए मार खा रहे हैं।

इनसेभी जो उन्नत हो चुके हैं वह 'विश्वानि देव...' और 'नमः शम्भवाय च' केवल एक बार आदिमें पहिला और अन्त में पिछला मन्त्र पढें। बाकी सारा समय बाकी भागके ध्यान जाप आदि में लगा देवें।

जो इन से उन्नत होंगे उन के दो प्रकार हैं। एक जो गायत्री जाप करेंगे। दूसरे जो 'आपो ज्योतिः' जपेंगे। संसारी पहिला जपेंगे, बाह्य दूसरा जपेंगे पर प्रणव और व्याहृतियां दोनों ही लेंगे।

अगले दर्जे में गायत्री छूट जायगी। 'आपो ज्योतिः' निःशङ्क साथ चल सकता है। उस से आगे कालांतर में वह चाहे छूट जाय, चाहे साथ रहे; पर 'ओ३म् भूर्भुवः स्वः' पर बल अधिक होगा, अन्त में केवल ओ३म् रह जावेगा। यह दर्जे ध्यान जाप के हैं, पाठक जिस दर्जे में हों तदनुकूल आचरण कर सकते हैं।

अब एक अन्तिम प्रश्न यह रह गया कि ओ३म् जपते जपते यदि चित्त अन्य ओर जाने लगे तो किस विषय की ओर उसे भेजना कम विघ्नकारक होगा ?

उत्तर यह है कि ओ३म् ओ३म् जपो। जब चित्त अन्य ओर जावे तो 'ओ३म् भूः ओ३म् भूः' जपो। जब टिक जावे फिर ओ३म् ओ३म् जपने लगो। यदि चित्त और भी बलवान् हो तो ओ३म् भूर्भुवः जपो, जब टिके तब ओ३म् भूः और जब और भी निश्चल हो तब ओ३म् जपो। इसी प्रकार चित्तकी प्रबलता तथा एकाग्रता के अनुसार ओ३म् से लेकर ओ३म् भूर्भुवस्स्वः जपो। यदि इस से भी वश में न हो तो 'महः जनः तपः सत्यम्' क्रमशः लगाये जा सकते हैं, यथा ओ३म् भूर्भुवस्स्वर्महज्जनस्तपस्सत्यम्। यदि फिर भी कठिनाई हो तो इनके साथ चाहे 'आपो ज्योतिः' चाहे गायत्री लगा लो और यदि अब भी कार्यसिद्धि न हो तो यह दोनों एक साथ लगाओ और 'विश्वानि देव...' और 'नमः शम्भवाय च...' लगाओ। यदि फिर भी मुश्किल हो तो संध्यादि नित्य कर्म श्रद्धापूर्वक करते जाओ, जब परमात्मा कृपा करेंगे तब आप ऊपर के दर्जों के योग्य हो जाओगे और तब आप उन श्रेणियों को पास कर के ब्रह्मके समीप पहुंचोगे पर दिल न छोडो, एक न एक दिन परमात्मा आप को अवश्य मिल जायंगे। यदि आप उन्हें मिलना चाहते हो तो—

इत्यलं भगवदिच्छकेषु ॥ ओ३म् शांतिः शांतिः शांतिः ॥

दूसरी झांकी ।

इस अध्यायमें पहिले कुछ विचित्र घटनायें दी जाती हैं। पाठक उनसे जो परिणाम परमात्माकी भक्तिके फलोंके विषय में निकालना चाहें निकाल लेवें। लेखक केवल उनके सर्वथा सच्चा होनेका उत्तरदायी है। एक भक्तको एक बार एक फोडा निकला, नाभिके कुछ दूर नीचे और पेडूके कुछ दूर ऊपर। कई दिन वह अन्दर ही अन्दर दर्द करता रहा और चकलीदार बनता प्रतीत होता था, बाहर उसका मुख न था। कई दिन पीछे भक्त को डर लगने लगा कि कहीं इसका ओपरेशनही न करवाना पडे, स्थानभी नरम है। कहीं खतरनाक न हो जावे। इस घबराहटमें उसको यह विचार आया कि Practical Divinity अर्थात् क्रियात्मिक ब्रह्मविद्याका तजरुबा करना चाहिये। उसके एक परिचित व्यक्ति इन गुप्त विद्याओंके जानने की गप्प हांका करते थे। वह उन्हींके पास गया और जाकर उनसे निवेदन किया कि "महाशय, मुझे कष्ट है आप यह विद्या जानते हैं, कृपया मेरा कष्ट दूर कीजिये।" उसने उत्तर दिया "मैं तो कई साल पहिले यह किया करता था फिर मेरे गुरुने मुझे रोक दिया।" भक्त निराश हो लौटा आ रहा था तो उसी व्यक्तिका प्रमुख चेला रास्तेमें मिला। उसे भी भक्तने कहा तो उसने भी "फिर कभी आप मिलेंगे ही; तब सही" कुछ ऐसे शब्दोंसे भक्तको टाल दिया। उनसे निराश हो भक्त को विचार आया कि तजरुबा तो अवश्य करना है। वह नहीं करते तो अब स्वयं ही करो। रात्रिको भक्तने ध्यान लगाकर 'ओ३म्' का जाप किया, रातभर उसका विचार यही रहा।

अर्थात् ओ३म् प्रभुका जाप ध्यान और अपने फोडे को ठीक करना। उसे नहीं पता कि वह कितनी देर सोया और कितनी देर जागता रहा। प्रातः उठकर देखा तो फोडेकी शकल बदल चुकी थी। चकलीदार गुम्मीके स्थानपर श्वेत मुखकी फुंसीके नीचे पानीसे भरा हुआ छाला हो रहा था; दो पहर या सायंतक फूटगया। सूखा Boric acid केवल कपडे खराब न हों इस विचारसे कई दिन भक्त लगाता रहा, आराम हो गया।

इसमें मुख्य ध्यानयोग्य यह भाव है कि केवल एक रात्रि परमात्मा के ध्यानने फोडेका रूप सर्वथा ऐसा बदला कि भक्तके सारे भय, कि न जाने ऐसे कुस्थल में ओपरेशन करवा कर कितना महान् दुःख उठाना पडेगा, एक बारगी दूर हो गये और उस को दृढ निश्चय हो गया कि वास्तवमें परमात्म-ध्यान सर्वोत्तम और सबसे सुगम प्रकार रोगोंको हटानेका है।

(२) एक दिन एक पुरुषके दान्तमें दर्द हो गया। उसने मोटे पिनसे दांतको कुरेदा पर दर्द न हटा। फिर एक दिन उसने नमक से दांत साफ किये फिर कुरेदा, पर दर्द न हटा। तीन चार दिन पीछे एक रात उसे विचार आया कि, क्यूं न इस दांतमें ओ३म् का जाप करूं। उसने अपना जिह्वाग्र दर्दके स्थानपर लगाकर ओ३म् का ध्यानयुक्त जाप किया और सो गया। प्रातः उठा तो बहुत आराम आ चुका था। दिन में एक दो बार फिर उसने थोडी देर दांतमें ओ३म् का ध्यान जाप किया: सर्वथा दान्त का दर्द हट गया।

(३) एक स्त्रीके पेटमें शूल हुआ करता था। एक बार प्रायः आधी रात के पीछे इस का दौरा पड गया, तो उसका पति अपने ताऊजी के लडके के साथ वैद्य को बुलाने गया और अपने छोटे भाई को सोए को जगाकर उस के पास

बिठला गये कि हम वैद्य को लेने जाते हैं, तुम यहां बैठो। नींद का मारा वह सोचने लगा कि जागना और इस प्रकार बैठना तो अब है ही, क्यूं न इसे ठीक ही करनेका यत्न करूं। उसने उसके पेटपर हाथ रखकर ओ३म्‌का जाप आरंभ कर दिया। वैद्यके आनेसे पहिलेही दर्द हट गया और जब वैद्य हाथसे पेट दबाकर देखने लगा तो उसने कहा कि दबाओ मत, ताकि दर्द अब शान्तही रहे।

(४) एक बार उसीको दर्दका दौरा पडा। अचानक उसकी हाय हायसे दूरके कमरेमें पडे हुए, एक भक्तकी आंख खुली तो तुरन्त आकर थोडी देर वह उसके सामने ध्यानकी अवस्थामें खडा रहा; तब दर्द हट गया तो वह चला गया। ध्यानमें स्थित उससे उज्ज्वल सूक्ष्म धुन्धसी निकलकर उसके और उस स्त्रीके मध्यके स्थानमें भर रही थी।

(५) एक युवकको सन्ध्यामें बडी प्रीति थी और वह बडे ध्यानसे ठीक समयपर घंटा घंटाभर संध्या करनेका यत्न किया करता था। यहां तक कि एक बार आर्यसमाजके वार्षिक उत्सवमें संध्याके समयभी व्याख्यान आदि होता देखकर उसने पूज्य श्री० स्व० स्वामी श्रद्धानंदजीको चिट (chit) भेजकर उनका ध्यान इस ओर आकर्षित कराया था। ऐसे संध्याभक्तको एक बार शूल हो गया लगभग आधी रातके समय। उसके पूज्य पिताजी ताऊजी मामूजी आदि सभी विद्यमान् थे। कभी लवंग कभी और और दवाइयां अनेक उन्होंने दीं पर शूल न हटे। इतनेमें कई घण्टे बीत गये और उषाकाल होनेको आया तो उसने अपने ताऊजीसे निवेदन किया कि, अब मेरा संध्या का समय हो गया अब आप मुझे संध्या करने दीजिए। वह मान गए। भक्त संध्यामें शीघ्र ही मग्न हो गया तो नींद आगई

और जब जागा तो शूल कभीका हट चुका था।

(अब ओ३म्कार महिमावर्णन की जाती है) यथा-

ओ३म् भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम्। आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्स्वरोम्॥ तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव॥ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ओ३म् उस प्रभुका पवित्र नाम है जो सबकी सदा रक्षा करनेके लिए सब स्थानपर विराजमान रहता है। उस रक्षकको सर्वव्यापक माननेवालेको भय कभीभी नहीं हो सकता। परंतु जो उससे विरोध रखता है, उसको भय बना ही रहता है। उपनिषद्में कहा है कि "यदन्तरं कुरुते तस्य भयं भवति" अर्थात् जो फरक करता है उसको डर लगता है। तात्पर्य यह है कि जो मनुष्य यह जानता हुआ कि परमात्माकी आज्ञा यह है, उसका पालन नहीं करता अर्थात् उसके पालनेमें फरक रखता है उसको डर जरूर रहता है। जैसे राजाके हुक्मसे उलटा चलनेवालेको डर रहता है कि मुझे राजदण्ड जरूर मिलेगा। इसके विरुद्ध सच्चा राजाकी आज्ञा माननेवाला निडर रहता है। ठीक इसी तरह उस महाराजाधिराज भगवान्की आज्ञा माननेवालेको भय नहीं होता और न माननेवालेको सदैव भय रहता है।

एक बात और सोचने योग्य है, वह यह कि बहुत बार ऐसा होता है कि अज्ञानतावश मनुष्य दुःख उठाता है। जैसे कोई किसीका बचपनसे मित्र हो और फिर दोनों जुदा जुदा हो जाएं, बीस वर्ष पीछे मिलें और एक दूसरेको न पहचान सकें,

तो यद्यपि मिले हुए हैं तोभी न पहचाननेके कारण उस मिलाप के आनन्दसे वंचित रहते हैं और बिछोड़के दुःखकोही अपनी अज्ञानतासे अनुभव करते रहते हैं। यदि कोई वृद्ध सज्जन जो दोनोंको बचपनसे बराबर अच्छी प्रकार मिलता रहा है कृपा करके उनको एक दूसरेसे परिचित करवा दे और उन्हें निश्चय करवा दे कि वास्तवमें वे वही पुराने बचपनके मित्र हैं तो उन दोनोंको मिलापका आनन्द अनुभव होगा और वह उसके कृतज्ञ होंगे। ठीक इसी प्रकार हम परमात्माको मुक्ति समयमें जानते थे परन्तु अब भूल गए हैं; इस लिए यद्यपि वह सर्वव्यापक हमारे रोम रोममें रहता हुआ हमारी सदैव सब दुःखों तथा आपदाओंसे रक्षा कर रहा है तोभी अपनी अज्ञानतावश हम उसके सदैव साथ रहते हुएभी उसके मिलाप के आनन्दसे वञ्चित रहते हैं। यदि कोई भक्त हमें यह निश्चय करवा दे कि हमारे अन्दर विद्यमान वह महान् से भी महान् आत्मा परमात्माही है तो हमें मिलापका आनंद आ जायगा और हम उस भक्तके कृतज्ञ होंगे।

अब विचार करना चाहिये, कि इस हमारे जीवित जाग्रत शरीरमें परमात्मा कौनसा है? क्योंकि यदि यह पहचान हो जावे तो हमने अपना जीवन जीत लिया। इस विषयमें हमारा धर्म हमें बतलाता है, कि परमात्मा आनन्दस्वरूप है, उसके विरुद्ध हम केवल चेतनमात्र हैं और प्रकृति केवल सत् है अर्थात् प्रकृति तो केवल भूः है। हम अर्थात् जीवात्मा भूः तथा भुवः हैं, परन्तु परमात्मा भूर्भुवस्स्वः है अतः अपनेसे भिन्न परमात्माको अनुभव करनेके लिए यह अतीव आवश्यक है कि इन तीनों शब्दोंके ठीक ठीक अर्थ हम समझें।

भूः का अर्थ भवतीति भूः है अर्थात् जो हो, उसे भूः कहते हैं,

अर्थात् जिसकी सत्ता हो नास्ति कभी न हो अर्थात् जो नित्य हो सदा रहनेवाला हो वही भूः कहला सकता है । क्योंकि संसार का कारणरूप नित्य द्रव्य कोई न कोई ऐसा होना आवश्यक है जिसमें प्रबंध परिणाम होनेसे संसार बन जाता है और फिर उससे उलटा परिणाम होनेसे संसार मिट जाता है । अतः उसी कारण द्रव्यका नाम भूः है वही प्रकृति है। भूःका अर्थ नित्य पदार्थ है अतः भूः जहां जगत्के कारण द्रव्यका वाचक है, वहीं साथ ही साथ वह उन असंख्य जीवात्माओंका भी बोधक है जिनमेंसे एक एकको हम अपना आप, अपना वास्तविक स्वरूप मानते हैं । हमारा आर्यधर्म, हमारे जीवन, जान, जीवात्मा अर्थात् उस व्यापक सूक्ष्म तत्त्व जिसके किसी शरीरमें विद्यमान रहनेसे वह जीवित प्राणी माना जाता है, उस आत्माको भी नित्य मानता है । आर्यसमाज जहांतक मेरा अनुमान है जीव आत्माको अणु मानता है अर्थात् इस शरीरके मस्तिष्क अथवा हृदयांतर्गत किसी एक परमाणु के अन्दर टिका हुआ उससे भी सूक्ष्म मानता है, परन्तु मैंने आर्ष ग्रथोंमें जीवात्माओं को विभु वरञ्च आकाश की न्यायीं व्यापक होनेसे परम महत् परिणामवाला पढा है उन ग्रंथोंमें वह प्रसंग किसी प्रकार से भी परमात्मापरक नहीं लगाया जा सकता । वह पुस्तकें भी ऐसी विवेचनात्मक हैं कि वह इस विषयमें अप्रामाणिक नहीं कही जा सकतीं, इसलिए मैं आर्यसमाजके अनुसंधान-कर्ता विद्वानों (Research Scholars) से नम्र निवेदन करता हूं कि वह 'जीवात्मा अणु है या विभु' इस गहन विषयको हाथमें लेकर तुरंत इसका निर्णय करें, क्योंकि यद्यपि ६-७ वर्षसे मैं इन प्रमाणोंको देख चुका हूं । मुझे इनके खण्डन करनेके लिए आर्षप्रमाण अबतक नहीं मिले ।

अस्तु। प्रकृति सत् है, नित्य है, इस लिये भूः है; जीव सत् है, नित्य है; अतः भूः है, परमदेव जगत्रक्षक सर्वव्यापक भगवान् नित्य हैं सत् हैं सदा एकरस रहकर सबकी रक्षा सब स्थान पर करते हैं वहभी भूः हैं। परंतु यतः प्रकृति जीव परमात्माके परस्पर सम्बन्धका ही एकरूप संसार और दूसरा रूप प्रलय है। अतः यहही पदार्थ वास्तवमें सार हैं, संसारका जीवन हैं, प्राण हैं, दुनियां जब जीती जागती है इन्हीं तीनोंके कारण जीती है; अतः भूः वाच्य त्रिपुटि ही संसारका प्राण है अतः भूःका अर्थ प्राण है। यह इसका दूसरा अर्थ है। क्योंकि जानसे अधिक प्रिय वस्तु किसीके लिए अन्य कोई नहीं होती इसी लिए प्राण ही प्रियतम माना जाता है। इसी लिये भूःका अर्थ प्राणसेभी प्यारा कर दिया जाता है। वास्तवमें भूःका आध्यात्मिक अर्थ सत्, प्राण, तथा प्राणप्रियही हैं। प्रकृति, जीव परमात्मापर यह तीनों अर्थ घट सकते हैं अतः यह तीनों भूः हैं। तीनों नित्य हैं, सबके प्राण हैं, सभीके प्राणप्रियभी यही हैं। उत्तम जन परमात्मा को प्राणप्रिय मानते हैं, मध्यम जन अपने जीवात्माको, अधम लोग प्राकृतिक पदार्थोंको। यह भूः का आध्यात्मिक वर्णन किया गया अधिदैविक तथा अधिभौतिक को छुआभी नहीं गया।

भुवः का अर्थ "भवन्ति यस्मिन्निति भुवः" है अर्थात् जिसके अन्दर होते हैं वह भुवः कहलाता है। क्योंकि इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, ज्ञान आदि लिङ्ग अर्थात् चिन्ह वा निशानियां जीवात्मा में और सर्वज्ञता सर्वशक्तिमत्ता आदि गुण परमात्मा में होते हैं इसलिये जीव तथा परमात्मा भुवः कहलाते हैं। प्रकृति केवल सत् होने से भूः ही है परन्तु जीव तथा परमात्मा सत् होते हुए साथ ही अनेक भावों क्रियाओं आदि

का अधिष्ठान भी हैं। अतः वह भूर्भुवः हैं। चेतन अर्थात् सज्ञान कर्ता होने से भी भुवः हैं।

भुवः का दूसरा अर्थ अपान है। क्योंकि अपान का अर्थ दूर लेजानेवाला है, जन्म मृत्यु (आवागमन) अथवा प्राणबंधन से विमुक्त करनेवाला है और ऐसी मुक्ति आत्माको केवल परमात्मा का आश्रय लेने और प्रकृतिसे दूर जानेसे ही मिल सकती है और अपने ज्ञान तथा कर्म से ही चेतन जीव उस अत्यन्त चेतन परमात्माके इच्छानुकूल आचरण करके ही उस मुक्ति को पा सकता है। इसी कारण चेतन जीव तथा परमात्मा अपान होनेसे भुवः के वाच्यार्थ हैं और इसी कारण सर्वदुःख-विनाशक हैं; क्योंकि जहां चेतना तथा ज्ञान का आश्रय लेकर मनुष्य उस परम चेतन सर्वज्ञ का आश्रय पकडता है वहां वह सब दुःखोंसे शीघ्र छूट जाता है। यह भुवः का आध्यात्मिक अर्थ हुआ।

स्वः का अर्थ है "सुवति इति स्वः" अर्थात् सकल जगत् को उत्पन्न करता है इस कारण वह भगवान् स्वः है। उत्पत्ति की क्रियापर विचार करनेसे पता चलता है कि जब माता पिता पुत्र को उत्पन्न करना चाहते हैं तो वह अपने आप को अतीव प्रसन्न करने का यत्न करते हैं। जब दोनों को परस्पर एकत्र वास्तविक आनन्द अनुभव होता है, उस समय पुत्र का वास्तविक जन्म होता है। अर्थात् उत्पत्ति का कारण आनन्द है इसी कारण सकल जगत् को उत्पन्न करने का कार्य जो भगवान् करते हैं, उनको उस उत्पत्तिक्रिया के निभाने के लिये जिस महान् सार्वभौम आनन्दका अनुभव होता होगा उस को कौन योगीराज वागीश्वर वर्णन करने को समर्थ है। यही कारण है

कि उस भगवान्को सृष्टिकर्ता होनेके कारण जो स्वः नाम दिया गया है, उसीका अर्थ सर्वसाधारण जनता केवल और सीधा आनन्दस्वरूप ही कर देती है। यह विचार करने की आवश्यकता ही नहीं समझती कि उसका यह अर्थ तो मुख्य प्रसवकर्ता अर्थके प्रसंग से ही गौणरूपेण निकलता है सीधा नहीं। अस्तु। आदि सृष्टिमें जीवनस्रोतका सञ्चार उस भगवान् के द्वारा ही हुआ था इस कारण स्वः शब्द प्रकृति, जीव के लिये नहीं केवल भगवान् आनन्दमय परब्रह्म के लिये ही प्रयोग किया जाता है।

स्वः का अर्थ व्यान इस कारण है, कि विशेष जीवनदाता तो आनन्दरूप भगवान् ही हैं। सामान्य प्राणदाता चाहे सांसारिक माता पिताही हों। इसी कारण ज्ञानी मातापितासे पूछो कि " आप के कितने बच्चे हैं?" उत्तर देते हैं "चार।" पर साथ ही कहते हैं "भगवान् के हैं" दूसरा भी यही कहता है " भगवान् की देन हैं अच्छा ईश्वर उनको दीर्घायु करे "। इस सारे से यही पता चलता है कि ईश्वर ही विशेष जीवनदाता तथा प्राणरक्षक है। इसी कारण सृष्टिकर्ता अर्थवाले स्वः शब्दका अर्थ जनता सीधा ही 'व्यान' करने लग गयी है।

इस प्रकार महाव्याहृतियों भूः भुवः स्वः के अर्थ द्वारा प्रकृति, जीव, ईश्वर का भेदवर्णन किया गया और दिखाया गया कि प्रकृति भूः सत् प्राणजीवनसार, नित्य आदि है, जीवात्मा भूर्भुवः, सत् चित् प्राण अपान जीवन मृत्यु सार, नित्य बुद्ध आदि है और परमात्मा भूर्भुवस्स्वः, सत् चित् आनन्द, प्राण, अपान व्यान जीवनमृत्यु आयु धारण साररूप, नित्य शुद्ध बुद्ध मंगल स्वभाव आदि है।

इस प्रकार विचार करने से मनुष्य अपने अंदर प्रकृति-जीव ईश्वरको भिन्न भिन्न अनुभव कर सकता है। मोटी पहिचान यह है कि शरीर प्राकृतिक है, क्रियाएँ दैवी अर्थात् आत्मिक हैं, आनन्द ब्राह्म है, इसी प्रकार यौगिक सिद्धियां, ब्राह्म संसर्ग, जीव का प्रकट करती हैं पाशविक तथा मूढ भाव, उसका प्राकृतिक संसर्ग सिद्ध करते हैं तथा ऐश्वर्य, राजसी ठाठ, मानुषिक भाव उस की स्वरूपमें स्थिति प्रकट करते हैं। शारीरिक स्वस्थता तथा नीरोगिता आदि प्रकृति से युद्ध न करने से प्राप्त होते हैं। क्रियाज्ञान कौशल्य स्वात्मा के हनन न करनेसे तथा आनन्द अनुत्तम सुख लाभ और सार्वभौम शक्तियां परमात्मा से मिलाप के द्वारा प्राप्त होती हैं। इस प्रकार अनुभव करनेसे हमारे शरीर में ही परमात्मा हमें प्राप्त हो सकता है।

अब उपरोक्त मन्त्रों का अर्थ लिखते हैं-

ओ३म् – हे सर्वरक्षक सर्वव्यापक भगवान् ओङ्कार।

भूर्भुवस्स्वः- आप सत् चित् आनन्दस्वरूप, सब के प्राण, दुःखभंजक, विशेष जीवनरूप, सब के प्राणप्रिय, सकल ज्ञान क्रिया आनन्द के स्रोत, प्राण अपान व्यान रूप हैं।

महज्जनस्तपस्सत्यम्- आप सबसे बडे, सब के पूज्य, सर्व पिता, परम तपस्वी, सर्वथा सत्यस्वरूप, नित्य निरंजन ओम्कार हैं।

आपोज्योतिरसोऽमृतम् ब्रह्म-सर्वव्यापक, तेजोमय, सर्वसार, जीवनप्राण, सदैव अमर, सबके कर्ता धर्ता हो।

तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्= उस सकल प्रेरक महादेव आपके, हमारे स्वीकार करने योग्य,

तेज- स्वरूप, पापनाशक शुद्ध पवित्र रूप का हम ध्यान करते हैं, जो भगवान् आप कृपा करके हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग की क्रियायोंमें प्रवृत्त करावें, उस ओर हमारी बुद्धियों को प्रेरें।"

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव यद्भद्रं तन्न आसुव= हे सकल जगत् स्रष्टा देवता! सब बुराइयों तथा दुःखों को हम से परे फेंक और जो कल्याण तथा सुख है वह हमारे समीप उत्पन्न कर, सर्वतः सुख हमें दे और दुःख परे भगा दे।

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च। ओ३म् शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः॥ शान्तिसागर, सुखसागर, शान्तिकारक, सुखकारक, कल्याणकारी, परम कल्याणकारी भगवान् को बारम्बार हार्दिक प्रणाम हों कि वह मेरी भक्ति से प्रसन्न होकर मुझपर सुख शान्ति सदा वर्षावे। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

(अब आगे परमात्मध्यान का फलवर्णन करते हैं) ओ३म् उस विश्वव्यापिनी सत्ता का परम पवित्र अभिधान है जो अथाह संसारसागर की समस्त दशाओं को सर्वकाल व्याप रही है।वही सत्ता संसार की वास्तविक संस्कृति है;क्योंकि उस सत्ता के निमेषोन्मेषरूपही प्रलय और सृष्टि हैं। उसका सोना जागना ही अव्यक्त तथा व्यक्त अवस्थाएं हैं। वह परम सत्ता सर्वसार परम सूक्ष्म एक तार चैतन्य है जिसके स्थूल रूप ही वैयक्तिक चैतन्य विविध देहों को डुलाते फिरते हैं। इन देहों का भार कई कई मनतक भी है। बडा आश्चर्य है कि ऐसी सूक्ष्म सत्ता किस प्रकार इतने भारी बोझ को क्षणभरमें उडाकर स्थानान्तरमें भेज देती है और इस से भी अधिक आश्चर्य यह

है कि एक ही सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्व सम्पूर्ण विश्वको कैसे चला रहा है? [स्थूल शब्द यहां आलंकारिक समझें]

प्रश्न यह है कि स्थूल सूक्ष्म चैतन्य, वैयक्तिक तथा सामूहिक दशाओंमें परस्पर सर्वथा भिन्न, कभी परस्पर एक होकर भी कार्य करते हैं या नहीं? उत्तरमें अनेक सिद्ध महात्माओंके जीवन हैं। इन्होंने अवस्थाविशेषमें "अहं ब्रह्म" "अनलहक" कहा है। वे इतनी उच्च कोटी के पहुंचे हुए साधु फकीर थे कि उन को झुठलाने का साहस नहीं किया जा सकता। मन्सूर इसी बातपर शूलिपर चढा दिया गया था पर कहावत है कि जो लहू के बूंद उसके गिरे उनमेंसे प्रत्येकमें से "अनलहक" की ही ध्वनि निकलती थी। भगवान् कृष्ण गीता में बारबार अपने आपको ही परम पुरुष कहते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वतिजीने भी अंतिम अवस्था यही वर्णन की है कि जैसे जल में डुबकी मारनेपर, डुबकी लगानेवाले के चारों ओर पानी ही पानी होता है उसी प्रकार परमात्मा के ध्यानमें मग्न योगी के ध्यानमें केवल परमात्मा ही होता है अपना आप भी उसको भूला हुआ होता है।

इस प्रकार सिद्धोंकी जीवनीएं यही दर्शाती हैं कि एक अवस्था ऐसी होती है जिसमें स्थूल सूक्ष्म ब्रह्म एकतार होते हैं। आत्मा परमात्मा परस्पर सम्बद्ध होते हैं। महात्मा गांधी व्रतोंके पश्चात् इस अवस्थामें अन्दरसे आवाज सुनकर अपना आगामी प्रोग्राम निश्चित करते हैं और तदनुकूल आचरण करते हैं। वेदमें ऐसी दशाके विषयमेंही कहा है कि ब्राह्मण ब्रह्मका मुख है। अर्थात् भगवद्भक्तही भगवान्की वाणी है; क्योंकि ऐसी दशामें जब आत्मा परमात्मासे संबद्ध होता

होता है तो आत्माद्वारा परमात्माका आदेशही जनताको मिला करता है। ईसामसीहको यही 'रेवीलेशन' होता था। इसी 'इलहाम'से मुहम्मद साहिबके करोडों पैरो हो गये। इसके ग्रहण करनेके लिये यह आवश्यक नहीं कि मनुष्य विद्वान् ही हो क्योंकि अविद्वान् लोग भी भक्त हो चुके हैं। कबीर नानकका प्रभाव उनकी सिद्धियों के कारणही जनतापर पडा है।

अगला प्रश्न यह है कि यह सम्बन्ध किस प्रकार बनता है और कैसे स्थिर रहता है अर्थात् वनकर टूटता नहीं? इसका उत्तर भगवान् कृष्णने भक्त अर्जुनको उस समय दिया जब कि उसने साफ शब्दोंमें कहा कि मैं आपका शिष्य हूं, घबराया हुआ हूं, मुझे सत्य पथकी शिक्षा दीजिए। इससे प्रथम अर्जुन भगवान्की अनेक अक्षौहिणी सेनाका लोभत्याग, केवल निःशस्त्र कृष्णको वर चुका था। फिर उनका शिष्य बनकर शिक्षाका प्रार्थी हुआ तब कहीं जाकर कृष्ण भगवान्ने अर्जुन महारथीको उपदेश किया और वहभी यह कि मुझमें ही अपना मन धारण कर मुझमेंही अपनी बुद्धिको प्रवेश करा फिर तू मुझमेंही निवास करेगा इसमें यत्किंचित्भी संशय न कर।

इस उपदेशपर विचार करनेसे वह भेद सहजही समझ आ सकता है। मनुष्य शुद्ध ब्रह्मको वरकर उसका शिष्य बन उस से उपदेश मांगे। उसकी विभूतियोंका लालच न कर उससे किसी प्रकार की लाभकी आशा न रखकर उसके वशीभूत अपने आपको कर दे। अपने आपको उसके दर्शन के लिये व्याकुल, अत्यन्त दुःखी, घबराया हुआ, जब अनु-भव करेगा उस समय भगवान् अपना दिव्य स्वरूप, विराट्रूप दरशाकर उस की श्रद्धा अपनेप्रति उत्पन्न करवाएंगे। तब

उसका मन, उसकी बुद्धि भगवान् में उलझ जायगी और वह उस समय ब्रह्मनिवासमें मग्न होगा । यही आत्मा का परमात्मासे सम्बन्ध जोडने का साधन है और नित्य प्रति ऐसा व्यवहार उस संबन्ध को स्थिर रखने का साधन है; ऐसा करनेवाला भक्त आत्मा परमात्मा का ही अंश समझा जाता है ।

ऐसा सम्बन्ध परमात्मा के साथ जिस आत्माको एकबार प्राप्त हो चुका है उस की व्यवहारमें क्या पहिचान होती है, इस प्रश्न का उत्तर आगे देते हैं । जिस को एकबार भगवान् मिल चुके हों फिर वह भगवान् को ही चाहता है । जैसे शिशु को मातृस्तनसे पृथक करने पर रोता चिल्लाता है, उसी प्रकार एक बार भगवान् का दर्शन पाकर फिर भक्त सदैव उसके दर्शनोंके लिये व्याकुल रहता है । शिशु माताके बिना वास्तवमें अन्य कुछ नहीं चाहता ऐसे ही भक्त भगवान् के बिना अन्य कुछ नहीं चाहता । शिशुमाता को ही अपना सर्वस्व समझता है भक्त भी ब्रह्मकोही अपना जीवनप्राण जानता है । इस भावना का प्रभाव शारीरिक व्यवहारोंपर यह पडता है कि उसे संसारमें, सांसारिक भोगों में, सांसारिक विचारोंमें निमग्न व्यक्तियोंमें, वह उत्कण्ठा, वह मोह, नहीं रहता जो संसारी जनों का परस्पर होता है । लोग उसे छोडने लग जाते हैं कि यदि तू दूसरी दुनियां का है तो हममें क्यों फँसा है, फकीर हो जा। परन्तु जबतक उस का कर्मफलभोग शेष है वह उनमें फँसा, मार खाता वाक्यशर सहारता रहता है और जब उसका वह भोगभुक्त हो चुकता है तब वह एक तरफ हो जाता है सदा के लिये भगवान् के चरणोंमें लग जाता है। ऐसे महात्मा दुर्लभ हैं । शास्त्रकारोंने इसी लिये आदेश किया है कि श्रद्धा-

तप, ब्रह्मचर्यपूर्वक वेद पढकर मनुष्य पण्डित बने । पर पण्डित बनकर फिर बालक बने फिर मौन साध जावे, फिर परमात्मा उसे मिलाही समझना चाहिये ।

एक और दृष्टांत ले सकते हैं। युवा अपनी प्रियाको प्राप्त कर कैसा उसमें उलझता है! देश दुनियांकी खबर पहिले दिनोंमें तो वास्तवमें उसे नहीं रहती । लोग कहने लग जाते हैं कि यह विचित्र पुरुष है। या तो विवाहके नामसे घबराता था और या अब पल भरके लिए वधूसे परे नहीं रहता । जैसे किसी व्यक्ति को अपनी विवाहितासे ऐसा प्रेम होता है कि उसके साथ आनन्द मनाता हुआ वह संपूर्ण संसारको एक बार तो भूल जाता है । ठीक इसी प्रकार परमात्माके दर्शन पाकर भक्त एक-दम संसारकी अवहेलना एक बार तो कर ही बैठता है और संसारभी उसे एक बार तो पागल कह ही उठता है । यद्यपि कुछ वर्षोंमें फिर वही संसार उसे सिद्ध बना लेता है ! ठीक उसी प्रकार जैसे कि नवविवाहिता दम्पती जिनमें उमंग अधिक हो पहिले लोगोंकी नजरोंमें गिरते हैं पर जब अत्युत्तम सुन्दर पुत्ररत्नसे वह शीघ्रही सुशोभित हो जाते हैं तो वह उत्तम सफल गृहीके रूपमें सबसे मान पाते हैं जैसे ऐसे दम्पती अपने आपमें मस्त दुनियांकी परवाह नहीं करते; ऐसेही भगवद्दर्शनप्राप्त भक्त, संसार उसे क्या कहता है, इस बातकी यत्किंचित् भी चिंता नहीं करता ।

स्वभावतः ऐसा व्यक्ति द्वंद्वविमुक्त होता है । न उसका किसीसे वैर विरोध, न मोह माया, न उसे सुखकी इच्छा, न दुःखसे द्वेष, न उसका कोई मित्र न शत्रु, न वह गर्मीसे व्याकुल होता है, न सर्दीसे सुकडता है, न वह स्तुति सुनकर फूलता

है, न निन्दा सुनकर घबराता है। उसके लिए वास्तवमें अमीरी गरीबी, लोहा सोना मिट्टी सब एक समान हैं। कारण यह है कि उसका विचार तो परमात्मापरही घूम रहा है, उसे अवकाश कहां जो उपरोक्त द्वंद्वोंके विषयमें वह विचार सके। इसी कारण बार बार भगवान् कृष्णने गीतामें बार बार अपने प्यारे के लक्षण यही बताए हैं।

उपरोक्त लक्षण उसके होते हैं जिसे परमात्मा ने अपनालिया हो। सिद्धियां ऐसे पुरुषके पांवों चूमती हैं। उसे उसी समय पता लगता है कि मुझसे जो इतना बडा अमुक काम हो गया है, वह बिना यौगिक सिद्धिके मुझ जैसे व्यवहारज्ञानविहीनसे होना सर्वथा असम्भव था। ऐसे भक्तकी शक्ति केवल एक प्रकारकी सिद्धिही नहीं दर्शाती वरंच अनेक और एकसीही चलती है। जैसे उसके लिए वर्षाको गिराना या हटानाभी, वैसाही स्वाभाविक तथा सहज है, जैसा कि किसी धर्मात्माको सतानेवाले दुष्टको अवनत करना या अपने भक्त श्रद्धालुको उन्नत करना। इसी प्रकार व्यवहारमें सहस्रों रुपयों की आय अथवा व्यय करवा डालना अथवा किसीकी इच्छा आशीर्वाद मात्रसे पूर्ण करवाना आदि उसके लिए साधारण बातें हैं। कारण कि उसका हाथ भगवान्के अटूट भण्डारमें पड चुका होता है। जैसे कि उच्च पदाधिकारिके मित्रको उसके कुत्तोंसे भय नहीं इसी प्रकार भगवान्के भक्तको कहीं रोक टोक नहीं होती। इसीको " हुक्म चलना " कहा जाता है। जिसका हुक्म नहीं चलता वह अभी कच्चा है, उसे अभी बहुत कुछ सीखना शेष है। उस बालकको चाहिए कि वह किसी भगवद्भक्त पितासे आशीर्वाद लेकर कृतकार्य हो।

परमात्म देव अनन्त, सर्वसमर्थ, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, विश्व-भेषज हैं। अतः दुःखी व्यक्तियोंके दुःख दूर कर सकना एक ईश्वरप्रेमीके बायें हाथका कर्तव है, जिसमें यह शक्ति नहीं वह अभी अधूरा है। उसे चाहिये कि वह भक्तोंकी चरणरज अपने माथेपर लगाए कि उनके हृदयसे निकला आशीर्वाद उसे कृत-कृत्य कर दे।

कहां तक लिखें भगवान्‌की भक्तिका प्रताप इतना व्यापक होता है कि वर्णन करना कठिन है। भगवान् अनन्त हैं तो उन के भक्त सान्त कैसे रह सकते हैं। यह ऐसा रोचक विषय है कि जबतक चाहो लिखते चलो इस लिये अभी विस्तारभयसे यहीं समाप्त करते है। ओ३म् शान्तिः ३॥

तीसरी झांकी।

(१) एक बार भारतवर्षके महामान्य नेताने घोषणा कर दी कि, मैं अमुक जनविभागकी समस्याके निर्णयके लिए व्रत अमुक तिथिसे आरम्भ करूंगा और जबतक वह निर्णय नहीं होगा, तब तक व्रत नहीं तोड़ूंगा, चाहे मृत्यु ही हो जाय। इस भयङ्कर व्रतकी घोषणा पत्रोंमें पढकर एक भक्त विह्वल हो उठा। उसने विचारा कि ऐसा उच्च कोटिका नेता इस प्रकार गंवाया नहीं जा सकता। उसने स्वयं उसी दिनही व्रत रख लिया और परमात्माकी ओर चित्त लगानेका यत्न दिन भर करता रहा। सायंकाल उसने अपने विचारानुकूल अपनी हार्दिक शक्ति से अपना संदेशा सरकारके उच्चतम अधिकारियों, महाराज तथा महामंत्रिको भेजनेका यत्न केवल दिव्य उपायोंसे किया और परमात्माकी एक प्रार्थना इसी विषयकी एक कवितामें लिखी। उसको अतीव प्रसन्नता हुई जब उसने समाचार-पत्रोंमें पढा कि उस नेताको एक सप्ताह ही व्रत रखना पडा, क्योंकि निर्णय हो गया। भक्त ने धन्यवाद किया उस भगवान्का जिसने उसकी टेर सुनी तथा सरकारके पास उसका सन्देशा तुरंत पहुंचाकर उसे सत्य पथ दर्शाया। भक्त अतीव प्रसन्न था कि महामान्य नेता अब तो अपनी आयु पूरी भोगेगाही।

(२) एक सज्जन की लडकीका विवाह था। उसका बडा जामाता विवाहसे तीन चार दिन पहिले ही आगया। उस

सज्जनने कहा कि 'मेरा विचार था कि तुम विवाहसे बहुत पहिले आकर मेरे साथ विवाहप्रबंध करनेमें सहायक होगे, परंतु तुमने लिख दिया कि मैं एक दो दिन पहिले ही आऊंगा। मैं स्वयं सुस्त हो रहता हूं। दो दिन ज्वर हो गया एक दिन न हुआ' इत्यादि। पुत्रने उत्तर दिया कि, पिताजी! पहिले तो यही होना चाहिये कि आपको स्वस्थ रक्खा जाय। फिर जब वह सोने लगा तो उसके सालेने बात बताई कि वर्षाके लिए छाया अर्थात् चांदनी आदिका प्रबंध करना होगा। उस ने मनमें सोचा कि वर्षासेभी बचाव करना चाहिये।

उस जामाताने इन दो विचारोंको अपने हृदयमें धारण कर लिया। परमात्माकी अपार कृपासे उसका ससुर विवाह-समाप्ति तक सर्वथा स्वस्थ रहा। तत्पश्चात् बरात अभी बिदा नहीं हुई थी कि उसको कुछ अजीर्णसा प्रतीत हुआ। उसने कहा कि, काका तुम्हारा ज्योतिष गलत होता जाता है। उसने कहा कि, पिताजी, जब हो जायगा तो कहना, बस वहीं व्याधि रुक गयी। इस प्रकार विवाहकालमें वह सब प्रकारसे स्वस्थ ही रहा और संपूर्ण कार्य उसने विना कष्ट के आनन्दमें ही निबाहा।

वर्षा न हो। इस निमित्त वह जामाता प्रति दिन स्नान करके सविता सूर्य हिरण्यगर्भ इन्द्र भगवान् आदि वर्षाविरोधी देवताओंकी स्तुति एक बार अवश्य कर लिया करता था। इस क्रिया के प्रति दिन करते रहनेसे वर्षा विवाहके दिनोंमें न हुई। ईश्वर अनन्त शक्तिमय है, उसके भक्त जब उससे सम्बन्ध जोडते हैं तो वह अपनी शक्ति उनमें से भेजने लगता है जैसे तांबेकी तारोंमेंसे बिजली भेजी जाती है। परिणाम

यह होता है कि भक्त केवल (Medium) माध्यम ही रह जाता है और उसका कार्य सर्वथा ईश्वरीय ही होता है। इसी प्रकार से ईश्वर अपने जनों की सहायता के लिये अपने भक्तोंको उनके पास भेज देता है और कार्यसिद्धिका निमित्त उनको बना देता है।

(३) उपरोक्त विवाहमें एक विचित्र बात हुई। वह यह कि कन्या का फुफ्फड (भुआका पति) एक विशेष भयसे प्रायः छः मास से ग्रस्त था। उस की कहानी कन्याके पिताने अपने जामाता को सुनाने के लिये कहा कि काका! यह विचित्ररूपसे फंसा हुआ है। इस का भी कुछ बनाओ। उसने सम्पूर्ण कहानी सुनी, फिर दूसरी बार सुनाने को कहा। उन फुफ्फड और पिता दोनों ही ने बडी सत्यता से इस प्रकार उस का वर्णन किया—

एक अपने गांववाले के साथ इसकी अनबन है। उस ने इसको तथा इस के पुत्र को फंसाने के लिये इनपर एक झूठा अभियोग करवाया, परन्तु उस में विपक्षी हार गये और यह सर्वथा छूट गये, इनका कुछ न बिगडा। इस पर उन्हों ने इन्हें तंग करने का एक विचित्र ढङ्ग निकाला। उन के पास एक आला (यन्त्र) है, वह उस से एक शीशे (Lens)के द्वारा अपने घरकी एक लडकी के माथे पर किरणें फेंकते हैं। तो वह लडकी बोलने लग जाती है और जो कुछ अपने स्थान पर बैठा यह फुफ्फड करता है, वह सब उस लडकी को दिखाई देने लग जाता है और वह सब वह उन यन्त्रवालों को बताने लग जाती है। उधर जब वह यह क्रिया आरम्भ करते हैं तो फुफ्फड को गर्मी (सेक) लगता है और उसका दिल घबराने लगता है, वह डरता है और उठ कर जपजी का पाठ करने लगता है। जब तक वह यह क्रिया करते

रहते हैं, फुफ्फड जपजी पढता रहता है; क्यों कि जैसे उधर लडकी को यह दिखाई देता रहता है उसी प्रकार इस को लडकी, यन्त्र, शीशा आदि उस स्थान का सब कुछ दिखाई पडता रहता है।

यह सब कहानी सुनकर समझ कर उस जामाता ने कहा कि फुफ्फडजी! आप की शक्ति उनसे बहुत बढी हुई है क्यों कि वह तो यन्त्र, शीशे, लडकीरूपी माध्यम, आदि की सहायता से इतना कुछ करते हैं और फिर भी आपका कुछ बिगाड नहीं सके और आप बिना किसी माध्यम यन्त्र आदि के ही वह सब कुछ देख लेते हैं और उन की कुचेष्टा को केवल जपजीपाठ द्वारा ही निष्फल कर देते हैं। अन्य उपस्थित सज्जनों ने भी इस का अनुमोदन किया। फुफ्फडका उत्साह बढ गया। अगली प्रात: उसने बतलाया कि आज मुझे बहुत कम कष्ट हुआ। तब उस जामाता ने उसे कहा, कि फुफ्फडजी! क्यों कि उनकी नियत अच्छी नहीं और वह आपको बहुत तङ्ग करते रहे हैं इस लिये मेरे विचार में आप को इसका भी अधिकार है कि जब आप को गर्मी (सेक) लगे उस समय आप यह उन को कहें कि मैं यह सेक तुम्हें वापस करता हूं। इस से वही सेक यदि उन की नियत बुरी होगी तो उनको लगेगा और यदि बुरी नहीं होगी तो उन की कुछ हानि नहीं होगी और आप का सेक हट जायगा; क्यों कि आततायि को दण्ड देने में दोष नहीं लगता और शठ के साथ शठता करने में भी विशेष पाप का भय नहीं। अगले दिन फुफ्फड ने बतलाया कि मैं आज उनकी प्रतीक्षा भी करता रहा पर कोई दिखाई नहीं दिये। अगले दिन फिर उस ने यही बतलाया कि मेरा कष्ट दूर हो गया।

इस विचित्र घटना के उल्लेख का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा-

रूपी हार्दिक विश्वास से भगवान् का वर्णन पढना महान् भयका निवारक है जैसे कि केवल जपजी पाठसे फुम्फड अपने शत्रुओंका प्रतिकार करता रहा और दूसरा यह कि भक्तको समयपर सत्यका स्फुरण होता है और उसकी वाणी सत्य कहती है जैसे कि भक्त जामाता तुरन्त व्याधि पहचान गया और वचन मात्र से उस व्याधि को उसने दूर कर दिया।

इन तीनों घटनाओंसे पता चलता है कि परमात्मा के भक्त की शक्ति बडी विविध तथा प्रबल और दूरङ्गम होती है। यथा भारतवर्षमें बैठे इंगलैंडमें विचार पहुंचाना केवल Telepathy हृदयों को दूरसे प्रभावित करने द्वारा, वर्षाको दूर भगाना, किसी पुरुषके रोगोंको दूर ही रखना, शत्रुओंके मानसिक प्रयोगोंसे कष्ट पानेवालोंको उन प्रयोगोंके प्रभावसे मुक्त करवाना आदि। इन चारों प्रकार की शक्तिका प्रकाश एकही व्यक्तिसे हुआ जो पूर्व लेखोंके अनुसार ओ३म् का हार्दिक जाप करनेमें प्रवीण था। इस कारण वास्तविक शक्तिस्रोत तो वही ओ३म्कार है जिसके ऊपर अगाध श्रद्धा होनेके कारण वह अपनी जीविकाभी सबके बार बार कहनेपर भी स्वतन्त्र उपार्जन करनेका ढङ्ग नहीं करता। क्योंकि उसको अटल विश्वास है कि जब मैं अपना मस्तिष्क ही भगवान् के विचारोंमें उलझाकर रखनेका यत्न करता रहता हूं और सांसारिक विचारोंको परे रखना चाहता हूं तो यह कब संभव है कि भगवान् मेरे योगक्षेम का प्रबन्ध न करें। इस प्रकारका अटल विश्वास यदि भगवान् पर किसीको हो तो भगवान् उसका अवश्य जीवननिर्वाह स्वयं करवाते हैं।

जिस ओ३म्कारका इतना महान् प्रभाव है, उसकी व्याख्या तथा वर्णन सर्वोत्तम रीत्या मांडूक्योपनिषद्में किया गया है और उसमें केवल इसी का वर्णन है। इसी कारण वही उपनिषद् उपनिषत्-सार कही जाने की अधिकारिणी है। क्योंकि उस एकहीका आश्रय लेकर भक्त भगवान् के समीप बैठ जाता है, इस कारण भक्तोंको भगवान् के समीप बिठलानेके लिये उस उपनिषद् का गुह्य यहां वर्णन करते हैं। वह यह है।

ओ३म् ही व्यापक नित्य तत्त्व है। माण्डूक्य महात्माका ब्रह्मके समीप बैठना।

कानोंसे कल्याणरूप ओ३म् शब्द ही सुनें। श्रद्धालु उपासक लोग हम आंखोंसे कल्याणरूप ओ३म्कार भगवान् का ही दर्शन करें। अङ्गोंको निश्चल करके अपने शरीरके सम्पूर्ण वाक् आदि अवयवोंद्वारा उसी भगवान् की स्तुति करते हुए विद्वान् तपस्वी यतियोंके लिये जो आयु दिव्य शक्तियों के संघर्ष-द्वारा परम देव परमात्माने भोग्यरूपसे स्थिर की है, उसको उसकी विशेष भक्ति करते हुए पुरी भोगें। वह अत्यन्त बढे हुए यशवाला परमैश्वर्यशाली इंद्र भगवान् ओ३म्कार सदा रहनेवाला ओ३म् रूप भद्र हमें देवे। सर्वज्ञ सर्वप्राप्त संसार तथा वेदका पालन-पोषणकर्ता पूषा भगवान् ओ३म्-कार उत्तम अस्तित्ववाला होता हुआ हमें कल्याण देवे। सूक्ष्म पदार्थोंको भी सूक्ष्मतम करनेवाला सर्वाधारनाभिः अटल तत्त्व जो किसको भी कष्ट अथवा दुःख देना नहीं चाहता, ऐसा तार्क्ष्य भगवान् ओ३म्कार सदा अपना सुखदायी अस्तित्व हमें अनुभव करवावे। बडे से बडों का भी आकाश, वाणी आदिकाभी

रक्षक पालक हमें सुष्ठुतया धारण करे जिससे हमारा सदा कल्याण हो। उसी ओ३म् की कृपासे सर्व प्रकारके शारीरिक, मानसिक, आत्मिक दुःख, भय, शोक हमारे सदाके लिये शान्त हो जावें, हम सर्वथा शान्त हों।

'ओ३म्' तो एक अक्षर मात्र है, परंतु वास्तव में सारा दृश्यमान् जगत् ही उसकी व्याख्या है जो बीत चुका, जो अब बना हुआ है और जो भी आगे कभी सम्भव हो सकता है, वह सभी असलमें ओ३म्कार मात्र ही है। कहां तक लिखें कालकी जहां पहुंच नहीं यदि वहां भी कोई सत्ता सम्भव है तो वह भी ओ३म् ही है, वहभी इससे भिन्न तथा बाहर नहीं। तत्पर्य यह कि यह सब ही ब्रह्म है। यह आत्माभी ब्रह्म है। यह ओ३म्कारही ब्रह्म आत्म सर्व है, कारण कि यह चार रूपोंमें प्राप्तव्य है।

सर्वरूपमें यह स्थूल बुद्धिवालोंको भी अनुभव हो सकता है। यथा जागता हुआ प्राणी बाहरके दृश्यमान कर्योंमें जब अपनी बुद्धि प्रयुक्त करता है तो वह अन्न खाता, शौच जाता, लोगोंसे मिलता जुलता है इत्यादि स्थूल भोग भोगता हुआ अपने उन्नीस प्रकारके भोगसाधनोंके प्रयोगसे अपने सातों अङ्गोंको दृढ अथवा क्षीण करता हुआ सभोको प्रत्यक्ष शरीरधारी प्राणीके रूपमें दृष्टिगोचर होता है। इसी प्रकार सर्व संसाररूप शरीर को धारण करनेवाला ब्रह्मरूपी प्राणी सर्वथा जीवित, जाग्रत है। अग्निमुखमें स्थूल पदार्थोंको डालकर उनको सर्वथा चूर्ण, बारीक टुकडे टुकडे करके अपने अन्तरिक्षरूपी उदर में उन्हें सर्वथा जीर्ण करके द्यौलोक आदि अपने मस्तिष्क आदि सातों अङ्गोंको उस जीर्ण रससे तृप्त तथा दृढ करता है और जो स्थूल भाग

वह लोकलोकान्तररूपी अङ्गमें परिणत नहीं कर पाता, वह पुरीष तथा मूत्र, ओले तथा वर्षारूप में फिर बाहर फैंक देता है और भूमि उसे फिर पवित्र करनेका यत्न करती है। ठीक उसी प्रकार जैसे मनुष्यके मूत्रको तथा पुरीषको पृथिवी फिर खाद समझ पवित्र करके औपधी आदि रूप दे देती है। सूर्य, चंद्र इसकी आंखें हैं। सूर्य की रश्मिएं इसकी optic nerves चाक्षुष शिराएं हैं, वायु इस के श्वासप्रश्वास हैं, दिशाएं इसके श्रोत्र हैं। अथवा सम्पूर्ण प्राणियोंके मुख, बाहु, ऊरू, पाद, वाक्, हस्त, सिर आदि सब वैश्वानर के मुख बाहु ऊरू पाद आदि हैं; क्योंकि इनमेंसे जब जिसे चाहे उसे वह अपने शरीर अवयव के रूपमें प्रयोग कर सकता है। इसी लिए वह सहस्रशीर्षा सहस्राक्षः सहस्रपाद आदि है वही वैश्वानर है। उसके भोगसाधन मुख १९ उसी प्रकारके हैं जिस प्रकार इस देहधारी मनुष्यके हैं। यथा ५ ज्ञानेंद्रियां, ५ कर्म-इंद्रियां, ५ प्राण, ४ अन्तःकरणवृत्तियां। सम्पूर्ण प्राणियोंके यह १९ मुख ही उस वैश्वानरके १९ प्रकारके मुख हैं। भेद यह है कि प्राणि के तो यह एक एक हैं पर उसके यह सहस्र सहस्र हैं। अर्थात् उसकी ज्ञान-इंद्रियां ५ नहीं, परंतु ५ सहस्र, कर्म-इंद्रियां ५ नहीं वरञ्च ५ सहस्र, प्राण ५ नहीं परन्तु ५ सहस्र, अन्तःकरण ४ नहीं वरञ्च ४ सहस्र इत्यादि। जहां सहस्रका अर्थ सर्व है और दोनोंका अनन्त। ऐसा वैश्वानर स्थूलभुग् जागरित स्थानमें बहिःप्रज्ञ है, १९ मुखोंवाला सात अङ्गोंसे युक्त है। जैसे हम जाग्रत अवस्था में पूर्णतया संसारी होते हैं, ऐसे ही यह वैश्वानर सृष्टिकालमें दिनमें पूर्ण संसारी होता है। इस रूपमें इस पादमें इसकी पूजा केवल आदर्श संसारी ही कर सकते हैं। संसारमें हर वस्तु का यथोचित प्रयोग ही इस

वैश्वानरकी वास्तविक पूजा है, चाहे जान बूझकर कर लो चाहे अनजाने। जो करेगा सो फल पायगा। जो केवल सोचता रहेगा वह इसका फल कैसे पा सकता है? पहिली श्रेणी यही है। परमात्मा की प्राप्ति में पहिला पाठ यही है। जो यही नहीं पढता वह आगे क्या चलेगा? इस की परीक्षा का पत्र भी यहीं वर्णित है, वह है कि क्या वास्तव में कोई ब्रह्म के पीछे ऐसा हाथ धोकर पडा है कि अब पीछे लौटनेका नाम लेना भी उसके लिये असंभव है। यदि वास्तव में उस के दृष्टिकोण में इतना अन्तर पडा चुका है तो समझो कि उस ने पहिली श्रेणी पास कर ली है। क्योंकि यह आरंभका प्रश्नपत्र है, यही Kindergarton class, Baby class है, कच्ची पहिली है, यह Test है कि बच्चा पाठशाला भेजने योग्य है, कि नहीं, School में इसे दाखिल करवाना चाहिये या अभी और कुछ वर्ष और ठहरना होगा। इसी कारण इस का नाम "अ" रक्खा गया है, आदि होने से, आप्तिसे। जिस की सब सांसारिक कामनाएं तृप्त हो चुकी हैं उस ने ब्रह्मज्ञान आरम्भ किया है, आदि उस की इस संस्थामें हो गई है यही दो शर्तें हैं। सांसारिक कामनाएं पूर्ण हो जाएं, वास्तविक आरम्भ हो जाए तब जानो वैश्वानर की उपासना सिद्ध हो गई, उपनिषद्-अधिकारी हो गया। यहांतक पहुंचकर फिर अगली जमाअतमें चढा दिया है, अगली श्रेणीमें प्रविष्ट होता है, दूसरे पादकी अन्वेषणा आरम्भ करता है।

वह है स्वप्नावस्थाकी न्यायीं। जैसे हम सोनेसे पूर्व तथा पश्चात् होते हैं अथवा जागने से पश्चात् तथा पूर्व होते हैं। इस में हमारा ज्ञान अन्दर की ओर होता है; परन्तु सातों अङ्गोंपर प्रभाव

उस का इस समय पडता है। १९ मुख इस दशामें भी भोग भोगते हैं, परन्तु भोगते हैं एकान्तमें, विशेष विविक्तता में। अत्यन्त सूक्ष्म भोग यह है क्योंकि यह केवल विचारभोग मात्र है।

Mental matter मात्र ही का यहां प्रयोग होता है। उदानरूप तेजकेही आश्रित् इस दशामें आत्मा होता है। यही दूसरी प्राप्तव्य अवस्था इस आत्माकी है। जैसे प्रथम अवस्था स्थूल प्राकृतिक भोग की है, वैसेही यही द्वितीय अवस्था सूक्ष्म मानसिक विचारात्मक भोग की है। परन्तु भोगसाधन वही १९ मुख हैं और भोगका प्रभाव उन्हीं सात अङ्गोंपर पडता है। भेद केवल यही है कि पहिलीमें बुद्धि बाहर को गई होती है, दुनियां की वस्तुओं में लगी होती है, यहां बुद्धि अन्दर ही होती है, विचारोंमें ही उलझी होती है, वस्तुओंसे सर्वथा असम्बद्ध होती है। पर प्रभाव इसका सातों अङ्गोंपर पड सकता है। जैसे जाग्रतमें क्रोध से मुख लाल हो जाता है, ऐसे ही स्वप्नमें गिर जानेसे भी बच्चा वास्तव में स्थूल रूपमें चीख मारकर रो पडता है, इसी कारण यद्यपि अन्तःप्रज्ञ है परन्तु है सप्ताङ्ग और क्योंकि उन्हीं १९ मुखोंसे ५ ज्ञानेंद्रियां, ५ कर्म-इंद्रियां, ५ प्राण-४ अतःकरण रूप भोगसाधनों से स्वप्न भोगता है, इस लिये मुख यहां भी १९ ही हैं। क्योंकि बिस्तर पर पडा अपनी ही रजाईमें लिपटा सर्वथा अकेलाही स्वप्न देखता है, इस कारण प्रविविक्तभुग् है, सर्वथा अकेला ही भोग भोग रहा होता है। परन्तु यह जाग्रत से उत्तम अवस्था अन्दर जानेवालेके लिये है। इस लिये "प्र" उपसर्ग लग गया। अर्थात् प्रविविक्तभुग् कहा गया कि है अकेला पर है संसारी साथियों के साथसे प्रकृष्ट दशामें। क्योंकि जो शक्तियां जाग्रतमें प्राप्त की हैं उन्हींके विकाससे इस स्वप्नमें सम्बद्ध होता

है, इस कारण "तैजस" कहाता है। क्योंकि उदान आश्रित मन मूर्द्धा से हृदय को जाता हुआ मार्गमें स्वप्न देखता है और उदानही तेज है, इस कारण उस तेज के आश्रित आत्मा 'तैजस' कहाता है। परमात्मा की दूसरी अवस्था भी यही है कि स्वप्न अवस्थास्थित जीवोंकी स्वप्न अवस्थाका साक्षी अधिष्ठाता।

इस कारण इस दशामें परमात्माका वही वर्णन किया जा सकता है, जो ऊपर जीव का हुआ है। भेद केवल यह है कि जीव अकेले अकेले इस दशा का अनुभव करते हैं। परमात्मा सबकी इस दशा को अन्तर्यामी होकर देखता भालता है और यदि चाहता है तो स्वप्न में ही दिव्य दर्शन दे जाता है। आकाशपाताल की सूचनाएं प्राणिमात्रको स्वप्नद्वारा ही दे डालता है। इस स्वप्नसंसारका अधिष्ठाता तथा दिव्य तथा पितर लोकोंका साक्षी तथा संसार के रचने से पूर्व उसका मानसिक चित्र निर्माता तथा वेदरूपी सृष्टिविज्ञानरचयिता इत्यादि रूपोंमें तथा पार्थिव संसार के पूर्ववर्ती शाक्तिक संसार का रचयिता होनेसे परब्रह्म 'तैजस' है, 'प्रविविक्तभुग्' है, 'अन्तःप्रज्ञ' है। परन्तु प्रभाव क्योंकि उसका इस अवस्थामें और भी अधिक सृष्टिके सूर्य, चन्द्र, अग्नि, पृथ्वी आदिपर पडता है इस कारण है फिर भी 'सप्ताङ्ग' और क्योंकि उन्हीं १९ भोगसाधनों के द्वारा सब जीवों तथा निर्जीवोंपर भी शासन वह कर रहा है, इस कारण मुख १९ ही हैं इस दूसरो अवस्थामें भी उसके।

यह अवस्था सूक्ष्म है पर शक्तिशालिनी है, विचामयी है। इस कारण प्रथम से उत्कृष्ट मानी गयी है, क्योंकि संसार भी विचारों का प्रभाव बडा प्रबल दृष्टिगोचर होता है। एक विचार संसार को क्रूर बना देता है, दूसरा नरम स्निग्ध। एक ज्ञानविस्तार

करता है, दूसरा अज्ञानता के गढेमें धकेल देता है। एक बच्चों को बहादुर बना देता है, दूसरा स्त्रैण इत्यादि। वास्तवमें विचार स्थूल प्रकृतिका अधिष्ठाता है। इसी कारण स्वप्नाजाग्रत्का अधिष्ठाता है। इसी कारण तैजस वैश्वानरका स्रोत है। विचार भोक्ता, एकान्त-सेवी स्थूल भोग नियामक है। अन्तःप्रज्ञ हि बहिःप्रज्ञतासे सफल हो सकता है। उकार ही अकारको 'ओंकार' रूपमें शक्तिसंपन्न प्रकट कर सकता है। दूसरी श्रेणीमें पहुंचा हुआ ही प्रथम श्रेणी-वालों पर आज्ञा कर सकता है। Second year वालेही First year वालोंको fool बना सकते हैं। वास्तवमें विचारवान् ही ऊंचा है, क्योंकि विचार ही स्थूल सृष्टिसे उठाकर मनुष्यको एकाग्रता, चित्त-वृत्तिनिरोध आदिकी ओर शक्तिस्रोत की ओर ले जा सकता है।

यही विचार ही दोनों का सम्बधकर्ता है। इस दशा में विचार-विस्तार खूब होता है। उत्तम उत्तम विचार संसार को इस दशा-वालोंसे हि मिलते हैं। Dreamers ने ही संसारके इतिहास के पृष्ठ बदल डाले हैं। आदर्श स्वप्न लेनेवालों में ही महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टागोर, मदनमोहन मालवीय, महात्मा हंसराज आदि गणनीय हैं, यही इतिहास बदलते हैं। इनके स्वप्नोंने ही D. A. V. College, Hindu University, Vishwa Bharati, Non-co-operation आदि युगपरिवर्तक काण्ड खडे कर दिये हैं। तैजस ही शक्तिशाली विचारक ही वैश्वानर बनते हैं, संसार का नेतृत्व निभा सकते हैं, इत्यादि। इस दशा में पहुंचे की पहिचान यह है कि उसके उच्च विचार, सत्य विचार बहुत विस्तार पाते हैं। वह द्वन्द्व आदि से मुक्त-सा समान एकरससा हो जाता है। ऐसे विचारकोंके जो सीधे सङ्ग में एकबार आ जाते हैं, वह फिर पीछे नहीं लौट सकते। गुरुके पाँच प्यारे,

दयानन्दके पाँच लॅफटीनेंट स्वा० श्रद्धानंद, पं० लेखराम, पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, महात्मा हंसराज, स्वा० दर्शनानन्द, यह उनके उज्ज्वल विचारसे विमुख होना मृत्यु ही समझेंगे। वास्तव में अब्रह्मवेत्ता उस ब्रह्मवादी के कुलमें नहीं जन्म ले सकता, जिसने 'उ' मात्राका ध्यान किया हो। वैश्वानर का तथा तैजस के ध्याता के कुल में परमात्मासे विमुख व्यक्ति जन्म नहीं ले सकती। क्योंकि जन्म-मरणसे परे आत्माओंको इच्छानुकूल आवाहन कर सकना उसके वशमें होता है। ऐसा भक्त केवल भक्त आत्माओं का ही अपने कुलमें बुलाएगा या भेजेगा और उसके लिये यह तो लोक और परलोक समानही होता है। उसके लिये यह कौनसा कठिन काम है, कि वह उस लोकसे भगवद्भक्तोंको ही इस लोकमें अपने कुलमें निवासके लिये बुलावे इत्यादि। 'उ' मात्रा के ध्याता की पहुंच अन्तरिक्ष लोकमें, यजुर्वेदके मंत्रोंमें होती है जैसे 'अ' ध्याताकी ऋग्वेदमन्त्रों में तथा पृथिवीलोक में। हां आदित्य लोक में तो 'म' ध्याता ही हस्ताक्षेप कर सकता है, क्योंकि सामवेद की गीतियोंपर अधिकार उसे ही होता है, वह 'म' मात्रावाला पद कौनसा है वह आगे लिखते हैं।

वह पद वही है जो हमारी सुपुप्तिकी दशा है, जहां हम सर्वथा कोई इच्छा मन में नहीं रखते। इस कारण कोई स्वप्न भी हम नहीं देखते, जागना तो क्या था? सर्वथा निद्राग्रस्त होते हैं, गूढ नींदमें पडे खुर्राटे लगा रहे होते हैं। उस दशा में हमारी प्रज्ञा न बाहरी व्यवहारों, स्थूल सांसारिक विषयों में चलती है न आन्तरिक, मानसिक सूक्ष्म विचारमें विचरती है। हम लौकिक पारलौकिक अनेक रूप त्याग कर सर्वथा एक हो चुके होते हैं, प्रज्ञा हमारी जम चुकी होती है। इसलिये बर्फ की न्यायीं

सर्वथा अचल अडोल होती है। इसमें जल की भान्ति प्रवाह सर्वथा नहीं होता। विचारतरंग शून्य, सर्वथा प्रवाहरहित, शान्त, गम्भीर होती है। आत्मा केवल सुषुप्ति-आनन्द भोगता हुआ आनन्दमय ही हो रहा होता है। चेतनता ही उस समय इस का एक मात्र भोग साधन होती है। इसी चेतनतारूप मुखसे वह आनन्द आस्वादन करता हुआ आनन्दमय होता है। उसी से प्रज्ञास्रोत निकल कर स्वप्न, जाग्रत अवस्था निर्माण करता है, इसी कारण यह प्राज्ञ कहलाता है। क्योंकि वास्तव प्रज्ञास्रोत इस की यही दशा है जैसी सात्त्विक, राजस, तामस सुषुप्ति भोगेगा वैसीही जाग कर अथवा स्वप्न में सात्त्विक, राजस, तामस प्रज्ञा प्रयोगमें लायगा, जैसे प्राज्ञरूप होगा तदनुकूल ही तैजस तथा वैश्वानरस्वरूप प्रकट होगा। इसी कारण प्राज्ञ "म" का वाच्य है क्योंकि प्राज्ञ ही तैजस वैश्वानरका मिननेवाला है। मितिसे ही इस अवस्था का वाचक "म" है अप्रीति के कारण भी। क्योंकि इसीमें दोनों जाकर अन्त होते हैं, यही दोनोंका स्रोत है। इस प्रकार जीव की तीसरी अवस्था का वर्णन हुआ। इस अवस्था का अधिष्ठाता परमात्मा भी प्राज्ञ है। यही परब्रह्म की तृतीय प्राप्तव्य अवस्था है, इस का तीसरा पाद है, इस दशामें वह सर्वज्ञ हैं, सब को जाननेवाले हैं। जैसे सुषुप्त जीव वास्तवमें अपने रूप का ज्ञाता है वैसे ही सृष्टिप्रलयसे असम्बद्ध परमात्मा, सबका जाननेवाला सब का अधिष्ठाता सब को अन्दर से नियमन करनेवाला, यही सब का कारण, सब का स्रोत प्राणि अप्राणियों की उत्पत्ति तथा प्रलयका कारण है। वास्तवमें इस दशामें जैसे जीव अपनी थकान उतारकर शरीरको नवीन शक्ति स्फूर्ति युक्त कर लेता है ऐसे ही इस अवस्थामें भगवान् विश्व को नवजीवन प्रदान करते हैं।

इसी कारण उन की इतनी महिमा वर्णित है कि सम्पूर्ण को मिन डालते हैं, सम्पूर्णका आप्यय इसमें इन्हींमें हो जाता है। परमात्माकी इस अवस्था का ध्याता भी यही पद प्राप्त कर जाता है। वह भी विश्व को मिनने लग जाता है। वह भी विचार तथा क्रियामय अन्तरिक्ष तथा पृथ्वीलोकस्थ प्राणि अप्राणियों को वश कर सकता है। सब का वह आप्यय स्थान हो जाता है। सब उस की ओर आते हैं, वह सब नापता है मिनता है। उसकी शक्ति विचारशील "उ" उपासक से अनेक गुणा बढी होती है। इत्यादि "म" पादका वर्णन किया गया।

"अ" उपासक की कामनाएं सिद्ध होती हैं। आरम्भ ब्रह्मविद्या का उसने कर लिया है, उस का आदि हो जाता है। संसार में मनुष्यलोक में उस की जड लग जाती है, वंश उच्छेद उस का नहीं होता। लोग उसे भक्त समझ उस के पास आने लग जाते हैं। पुत्र पौत्रवान् वह चिरायु पाता है, इत्यादि।

"उ" उपासक उत्तम विचार विस्तार करता है, मरने जीनेमें समान रहता है। इस लोक और परलोक के विषय में दोनों को समान समझकर बात करता है। मरे-जीतोंमें एक सी उपेक्षा रखता है, उस के कुलमें कोई परमात्मा से विमुख नहीं होता अर्थात उसका चेला, उस चेलेका चैला, आदि उसकी ब्रह्मगद्दी चलती है। उस के मरने पर ही उस के विचार समाप्त नहीं हो जाते।

"म" उपासक सम्पूर्ण संसार को मिन जाता है, सब का आश्रय आप्यय हो जाता है। वही सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, सर्वयोनि, सृष्टिप्रलयकारण और सबका अन्दर से नियमनकर्ता हो जाता है। चाहे इन सिद्धियोंका प्रयोग करे, चाहे इन से विरक्त हो चतुर्थ पादका ध्यान जमावे।

चौथे के लिये ओ३म् शब्द में कोई मात्रा नहीं रक्खी गई। क्योंकि वह वास्तवमें व्यवहारसे तो सर्वथा पृथक् है। उस दशा में पञ्चभूतों के पञ्चीकरण प्रपञ्च की तो सर्वथा शान्ति पहिले ही देर हुई, हो चुकी होती है। अत: वह सर्वथा इन्द्रियगोचर है, वह चक्षु से देखा नहीं जाता, वाणि से वर्णन नहीं किया जाता, हाथोंसे पकडा नहीं जाता, प्रकट चिह्न कोई उसे पहचनवा नहीं सकते। मन का विषय नहीं, विचार से परे है, नाम उसका रख नहीं सकते; क्योंकि ओ३म्कार की मात्राओंसे भी परे है प्रज्ञाके व्यवहारसे सर्वथा ऊपर है, शान्त निस्तरंग कल्याणमय शव सर्वथा द्वित्वरहित केवल व्यापक सत्ता मात्र केवल एक तत्व है। वह अन्तिम अवस्था ज्ञेय विज्ञेय है। वहां जीव परमात्मा भेद नहीं, वहां एक ही आत्मा है। आत्मा ही आत्मा के द्वारा ही आत्मा को ही प्राप्त कर लेता है। सर्वथा उस समय एक ही आत्मतत्त्व अनुभव होता है। जबतक दूसरेका भान है, तबतक चतुर्थ पाद प्राप्त नहीं हुआ।

इस प्रकार ओ३म्कार की मात्रओं तथा अमात्र चतुर्थ द्वारा ब्रह्मात्मा के पाद वर्णित हुए। क्योंकि इन दोनों का परस्पर पादमात्रा सम्बन्ध बडा सुन्दर समुचित है। आशा है इस भेदके खोलने से वह ब्रह्मात्मा मुझपर प्रसन्न होगी और मुझे तथा पाठकों को अपने चारों दर्शन देकर कृतार्थ करेगी। बारबार उसे तथा उस के उपासकों को प्रणाम हो।

चौथी झांकी।

परमात्मा की भक्ति में जब रुचि बढती है तो मुमक्षु भक्तों की खोज में यह भेद छोड देता है कि यह हिन्दू है या मुस्लिम, शिक्ख है या ईसाई, चंगड है या राजज्योतिषि। एक ऐसे मुमुक्षुने एक मुसलमान मौलवी से उस की विद्याके जाननेके लिये प्रश्न किये उत्तर में उसने जो बताया उसका सारांश अपनी आर्य-प्रणाली अनुसार इस प्रकार होगा कि:—

" प्रथम अवस्था यह होती है कि स्वप्न अपने विचारके अनुकूल अथवा बिना विचार किये भी अधिकाधिक उपयोगी आने आरम्भ हो जाते हैं। दूसरी अवस्था में आपके विचार का पता देकर आगामी होनेवाली बातें कोई व्यक्ति स्वप्न में आकर बतलाने लग जाता है। तीसरी अवस्था यह होती है कि स्वप्न की आवश्यकता नहीं रहती वरंच जब भी विचार करो तो वह व्यक्ति तुरन्त आ उपस्थित होगा और आपकी इच्छानुकूल कार्य करेगा जो आप पता लगाना चाहें वह जाकर लायगा इत्यादि। इस अवस्थाका नाम " फकीरी दर्जा " है। चौथी अर्थात् अन्तिम अवस्था यह है कि उस व्यक्तिसंसार पर आप का राज्य होगा, स्वयं वह व्यक्ति आपकी सेवामें उपस्थित होकर आपसे आज्ञा लेंगे और तदनुकूल आचरण करेंगे, यह अन्तिम अवस्था इस विद्याके विद्यार्थियों की है। यदि देवता सम्बन्धि वेदमन्त्र पढे जायंगे तो देवता उपरोक्त रीतिसे सिद्ध होंगे और यदि पितरसम्बन्धि वेदमंत्र पढे जायङ्गे तो पितर जो केवल " ओ३म् " " ओ३म् " जपते हैं, वे यदि देवता या पितरों की सहायता चाहें तो परमात्मा की आज्ञासे देवता अथवा पितर उनकी सहायता के

लिये उपस्थित होते हैं। यदि केवल परमात्मा का नाम "ओ३म्" ही लें और देवता या पितरों की सहायता न चाहें तो परमात्मा की ओरसे सीधा ही अपने प्रश्न का उत्तर मिल जाता है अथवा ज्योति अथवा ज्ञान प्रकाशित हो जाता है, यह उत्तम अवस्था है।

इस विद्याकी चार शरतें हैं, कि झूठ, व्यभिचार अथवा भोग, निन्दा तथा पिशुनता, परमात्मा को स्मरण न करना, इन चार दोषोंसे सर्वथा दूर रहे। समयपर अभ्यास अवश्य करना चाहिये अन्य समय जैसी इच्छा हो। यदि साधनमें न्यूनता या गडबड हो तो यथेच्छ प्रत्येक समय पर ठीक ठीक उत्तर नहीं बतला सकता। (स्वा० सत्यानन्दजी की भी यही सम्मति है कि अभ्यास समय पर अवश्य करना चाहिये अन्यकाल अपनी इच्छा है चाहे जितनी देर करो) उक्त मौलवी साहिबने अपने मत तथा आचरणानुकूल वेदके स्थान में "कुरआन शरीफ" ओ३म् के स्थान में "अल्ला" देवताओं के स्थान में "मलायक" पितरों के स्थान में 'जिन्न' इत्यादि शब्दप्रयोग किये थे। हमने वैदिक प्रणाली के अनुकूल शब्द प्रयुक्त कर दिये हैं।'

इस प्रकार यहां यह नवीन प्रसङ्ग चल पडता है, जो इस लोक का नहीं जाग्रत अवस्था के स्थूल दृश्यमान जगत् का, मनुष्य लोकका, नहीं। इसके उदाहरण आगे दिये जावेंगे। परन्तु इस स्थान पर पाठकों को यह भली भांती समझ लेना चाहिये कि जो दृष्टान्त अथवा चमत्कार इस विषय के पूर्व तीन लेखों में दिये गये हैं, वह तो मनुष्य संसार की जाग्रत अवस्था की सत्य घटनाएं हैं, परन्तु अब जो वर्णन करते हैं वह स्वप्न हैं अथवा अन्तरिक्ष

अथवा देवलोक के दिव्य दर्शन।

इस विषय में उपनिषद् में साफ शब्द आये हैं कि "यथाऽदर्शे-तथाऽत्मनि यथा स्वप्ने तथा पितृलोके। तथा अप्सु परीव ददृशे तथा गन्धर्वलोके छायातपयोरिव ब्रह्मलोके" अर्थात् अपने ही शुद्ध अन्तःकरण में त्रिलोकी का आभास इस प्रकार पडता है जैसे कि मुंह देखने के शीशे में देखनेवालों का आभास। अन्य किंचित् भेद नहीं होता वास्तविक सत्य जागरित अवस्था के दृश्य दीखते हैं। इसका उदाहरण आज कल एक चड्गड है लाहौर से लगभग ३०-३५ मील पर। वह दूरदेशस्थ अनुपस्थित व्यक्तियों मकानों आदि को सामने प्रत्यक्ष देखकर वर्णन करता है। जागता हुआ भक्त आंखें खोले परन्तु अपने अन्दर संसार बिछा हुआ ऐसे ही देखता है जैसे कि दर्पण में अपना मुख।

पितृलोकसम्बन्धि दृश्य मनुष्य अर्ध जागरित अर्ध निद्रित परंतु स्वप्नसे भिन्न दशा में स्वप्न की भान्ति देखता है पर वह जानता है कि यह स्वप्न नहीं दिव्य दर्शन है। इस के उदाहरणरूप अनेक "स्वप्न" यहां दिये जायेंगे क्योंकि साधारण जनता की भाषामें उन्हें स्वप्न ही कहा जा सकता है जैसे स्वप्न देख लिया वैसे ही पितरों के दर्शन पा लिये।

अगले गन्धर्वलोकसम्बन्धि पाद का साक्षात्कार होने पर फिर लिखा जा सकेगा ऐसे ही ब्रह्मलोकसम्बन्धि पाद के विषयमें।

पितरलोकसम्बन्धि एक और प्रमाण भी आज कल प्रख्यात है, वह यह कि एक लकडी पानकी आकृतिवाली जिस में एक पिंसल लगा दी जाती है और कुछ सब ओर आसानी से घूम सकनेवाली गोलियां जिस के नीचे लगी होती हैं और जिसे प्लैन-चिट कहते हैं (वह केवल ध्यान जमाने का साधन मात्र है)

उसको साफ कागजपर रख उसपर हाथ रखकर अमल करनेवाला विचार करता है कि कोई आत्मा आवे। तो कुछ तजरुबे के पीछे उस कागजपर, उस आत्मा का नाम, उस पिंसलसे लिखा जाता है

फिर जो जो प्रश्न उस से किये जायं उनका उत्तर वहां लिखा जाता है।

जिन्होंने यह किया है वह कहते हैं कि प्रश्नोत्तरों से यह मानना ही पडता है कि अवश्य स्वतन्त्र आत्माएं अन्तरिक्ष में विद्यमान हैं, जो इस प्रकार आवाहन से आती हैं। इन में साधारणतया पहिले एक परिचित मृत व्यक्ति की आत्मा आती है और वह जिस को आप कहें उस को भेज देती है वह पहिली या पिछली स्वयं ही फिर प्रश्नों के उत्तर देती है। यह विषय जिसपर बहुत विवाद रहा है कई स्थानों से सिद्ध अब हो रहा है। इसी प्रकार का व्यक्ति मुसलमान लोग वशमें करते हैं यही व्यक्ति प्लैनचिट-पर आते हैं यही पितृलोक दर्शन उपनिषत्कार को अभिप्रेत प्रतीत होता है इसी प्रकार के दर्शन स्वप्नमें समय समय पर हुए हैं वह यहां अब वर्णन किये जायंगे।

जो उत्तम अवस्था परमात्मा से उत्तर प्राप्त होने की ऊपर लिखी गयी थी उस दशामें जो ज्ञान के चमत्कार भक्तों को मिलते हैं उन्हें भक्तजन फुरने, "सोझियां" या भगवान् का प्रसाद कहते हैं या दाता की देन' परन्तु योगदर्शनमें इसे 'ऋतम्भरा प्रज्ञा' कहा गया है एक बार इस का आरम्भ हो जाय फिर श्रुत तथा अनुमानद्वारा प्राप्त ज्ञानमें रुचि घटती ही जाती है क्योंकि इसका संस्कार उनके संसारों को रोकता, दुर्बल करता रहता है। यह प्रज्ञा सर्वथा सत्य ही दर्शाया करती है। इसको अङ्ग्रेजी में Intuition (इनटयुशन) कहते हैं जब यह धारा

प्रवाह रूपमें वह निकले तब इसीका नाम Revelation रेवीलेशन पड़ जाता है। इसी के परिणाम स्वरूप अत्यन्त उच्च दशाके योगीराजों को वेद परमात्मासे मिले और आजकलके उच्चतम वैज्ञानिक Einstein (ईनस्टन) आदिको आधुनिक विज्ञान की पराकाष्ठा के सिद्धान्त Theories सूझते हैं जैसे ग्रामोफोन, वायर लैस, एहरोप्लेन आदि के प्रकाशकों को अथवा Ralativity रैलेटीविटी और (Radioactivity) रेडियोऐक्टिविटी के आविष्कारकोंको।

अब स्वप्नों का उल्लेख किया जाता है—

(१) एक व्यक्तिके चचा बड़े शक्तिसम्पन्न हुए थे पर उसके बाल्यकालमें ही वह स्वर्गवास कर गये। वह व्यक्ति जब युवा हुआ और कालिज में पढने गया तो एक दिन उसे विचार आया कि मेरे चचा इतने सिद्ध पुरुष हो गुजरे हैं, और मैंने उन्हें देखा भी नहीं उन्हें देखना अवश्य चाहिये। एक सप्ताह यह विचार प्रबलरूप से उसके मन में विद्यमान रहा तब एक रात उसको स्वप्न आया कि वह अपने पिताजीकी गोद में है और उसके चाचा जी तथा तायाजी पास बैठे हैं। पिताजी ने उसे चाचाजीकी गोद में बिठला दिया और चाचाजी ने उसे यह कह कि 'करते जाना, छोडना मत' अपनी गोदीसे वापस उसके पिताकी गोदो में दे दिया आँखें खुलने पर वह व्यक्ति अतीव प्रसन्न था कि उसको उसके सिद्ध चचाके दर्शन हो गये। वह कुछ कुछ प्राणायाम, आदि कभी कभी किया करता था, परन्तु उसकी इच्छा योग के लिये तीव्र सदा रहती ही थी।

(२) एक व्यक्ति के दफ्तर का एक बाबू गुजर गया उस के पीछे तीन चार बार उसको विचित्र स्वप्न आये। एक में उसके

सामने विचित्र मूर्तियां एक के पीछे दूसरी गुजरती गयीं, वह घबराने लगा तब एक साधुकी मूर्ति भी गुजरी, वह उसे अच्छी लगी। उसने चाहा कि यहीं कि यहीं ठहरी रहे पर वह भी चली गई इत्यादि। परन्तु अन्तिम बार किरया की रात उस व्यक्ति को स्वप्न आया कि दफ्तर लगा है, वह बाबू उसे आकर मिला है, और लओजी हुन असी जाने हैं (लोजी अब हम जाते हैं) कहकर नमस्ते करके चला गया। उस को जाते देख उस व्यक्तिने उसे कहा 'भई! बाकियांनूं बी मिल जाईं (भाई! अन्य सब को भी मिलते जाओ)' उस दिन के पीछे उस बाबू के स्वप्न उस व्यक्ति को आने सर्वथा बन्द हो गये।

(३) एक व्यक्ति का गुरु स्वर्गवास कर गया और प्राय: दो मिन्ट में ही हृदय की गति रुक जाने से ऐसा हो गया। उसको उस के प्रति बडी श्रद्धा थी। उसको इच्छा हुई कि अब उन के दर्शन करने चाहिये यह इच्छा प्रबल हुई तो एकरात उसको पर्वतों में घोडा दौडता दिखाई पडा। सवार अदृश्य था पर उसे निश्चय हो गया कि यही मेरे गुरु घोडेपर सवार काश्मीर के पर्वतों में फिर रहे हैं। उसे यह इच्छा अब रही कि गुरुजी के दर्शन तो नहीं हुए उन को सक्षात् भी तो देखना चाहिये। एक रात्रि उसे स्वप्न आया कि Biology बाइआलोजी की परीक्षा के पीछे लैबोरेटरी क्लास Laboratory Class में नम्बर सुनाए जा रहे हैं एक के कुछ कम थे तो अन्योंके कहने पर वह बढाने लगे तो देखा कि इस को तो पहिले ही नरमी से नम्बर मिले हुए हैं, इस के पीछे उन्होंने स्वप्न लेनेवाले व्यक्ति को कहा "Now you have seen me" कि अब तो तुम ने मेरे दर्शन कर लिये! तत्पश्चात् स्वप्न समाप्त हो गया।

(४) एक व्यक्ति को स्वप्न आया, कि उसके बाबाजी अपने कुएं पर स्नान करने के लिये सीढियां उतर रहे हैं। उसे समझमें न आवे कि कैसे स्वर्गवासी बाबाजी उसे दिखाई पडे। कुछ दिनोंमें ही उसे पता लगा कि उसकी ताऊजी की लडकी स्वर्गवास कर गयी। यह बहिन महदपूर में मरी थीं पर चिरसे बिमार थीं और अपने पिताजी को मिलने को अत्यन्त उत्सुक। पर कारण वश मेल न हो सका था। उसके पिताजी लुध्याने रहते हैं और लुध्याने के कुएं पर बाबाजी आ रहे थे।

इन चारों स्वप्नोंसे यह पता चलता है कि वास्तव में अन्तरिक्ष अथवा सूर्य आदिमें आत्माएं हैं जो स्मरण किये जाने पर दर्शन दे जाती हैं जैसे सिद्धचचाने, स्वर्गवासी गुरुने, स्मरण करनेपर दर्शन दिए। दूसरे यह कि मरने के पीछे किरयातक आत्मा स्वतन्त्र सी होती है तब तक दर्शन दे सकती है, जैसे दफतर के बाबूने यह भेद खोल दिया। तीसरे पितर लोग अपने कुलवालोंकी मृत्यु आदि की सूचना अपने अन्य उससे दूरदेशस्थित कुलवालों को दे जाते हैं जैसे पूज्य बाबाजीने किया। यदि ये आत्माएं इस प्रकार कुछ स्वतन्त्र न होतीं तो कैसे दर्शन दे सकतीं। अब अन्य विचित्र स्वप्न यहां लिखे जाते हैं यथा—

एक व्यक्ति कोClayorvoyance दिव्य दर्शन प्राप्त करनेकी तीव्र उत्कण्ठा थी। एक रात्री उस को निश्चय हो गया कि यह मेरे अपने मन के स्मृतिरूप विचार हैं यह स्वप्न है यह दिव्य दर्शन। उस को तीन बातें दिव्य दर्शन प्रतीत हुईं एक तो वह भूल गया दो निम्न लिखित थीं:—

(५) वह रजाई से मुंह सिर लपेटे पडा था वैसे बाहर अन्धेरी रात थी! लगभग आधीरात का समय। उसे एक

चौडी सडक के दोनों ओर श्वेत बंगलों की पंक्ति दृष्टिगोचर हुई और उसे निश्चय हो गया कि इस अन्धेरी रातमें रजाई में लिपटे हुए मैं ने यह दृश्य ऐसे देखा है जैसे कि सर्वथा स्वतन्त्र रूपसे संध्यासमय प्रातः देखा हो । यह दृश्य इसी लोक का 'यथाऽदर्शे तथाऽत्मनी ', उदाहरणरूप था ।

(६) वह देरमें जागा करता था एक भद्र पुरुषने उसका ध्यान इस त्रुटिकी ओर आकर्षित कराया । कई दिन बीत गये पर वह यह त्रुटि दूर न कर सका । एक रात उसने अपने स्वर्गवासी सिद्धचचासे निवेदन किया कि आपही मेरे दो चार लगा कर मुझे ठीक करें । उसको उस रात यह दृश्य दिखाई पडा कि पीछे सूर्य्य रक्तपीत वर्ण उदय है और उससे कुछ दूर आगे सूर्य्य रश्मियों पर उतर कर उसके चचाने उसे झाडसा दिया यद्यपि चचाकी इह लोकवाली मूर्ति नहीं दिखाई पडी तथापि उस व्यक्तिको निश्चय हो गया कि मेरे पूज्य चचा आज कल सूर्य लोकमें निवास कर रहे हैं और मेरी विनय सुन सूर्यरश्मियों द्वारा उतरकर मुझे चेतावनी दे गये हैं । इस प्रकार उसे निश्चय हो गया कि यह न जाग्रत स्मृति है न स्वप्न यह तो दिव्य दर्शन ही उसे उसके सिद्ध चचा का उनकी कृपासे हो गया है वह इससे बडा प्रसन्न हुआ । सम्भव है, यह "छायातपयो- रिव ब्रह्मलोके" का ही उदाहरण हो ।

(७) एक व्यक्ति भक्त मित्रको मिलने गया । वहां कई मित्र एकत्र हुए थे । एक अपने विदेशाऽनुभव सुनाने लग गया और इधर उधर की बातोंमें ही समय निकल गया वह जब घर लौटा तो वहां की एक दो दिनकी बातों का स्मरण

करके उसे विचार आया कि मैं अज्ञानियोंकी सभामें जाता हूं कहां जाया करूं जो सभा मेरे योग्य हो। रात्रीको जब वह सोया तो उसे दो विचित्र स्वप्न आये एक में तो साधु लंगोटबंद दरम्याना कद स्वस्थ कुछ सोता जागतासा दिखाई दिया, जिसको देख कर वह आनंन्दित हो गया क्योंकि उसको निश्चय हो गया कि वह उपनिषत् वर्णित सिद्ध सायुग्वा रैक्व है। दूसरा फिर कभी लिखा जायगा।

(८) एक भक्तको पठानों जैसी पगडी सलवार (तंग घेरेकी) कुर्त्ता पहिने एक पतलासा व्यक्ति दिखाई दिया और बोला " मै कबीर हूं " भक्त अचम्भेमें आकार बोला " हैं आप कबीर हैं " भक्त को पीछे पश्चाताप हुआ कि उसको मैने नमस्कार क्यों न किया। इस दर्शन के समय भक्त जागता जागता अभी सोया न था कि एक सैकण्डमें यह घटना घटी और भक्त जग गया। जैसे कहें कि भक्तको Visible दृश्यरूपमें Strike हुआ फुरना हुआ।

इन दोनों माहात्माओं भक्तराजोंके दर्शनसे भक्त निहाल हो गया।

अब इस लोकसम्बधि दो सच्चे स्वप्न लिखे जाते हैं एकमें दूर देशका ज्ञान मिला और दूसरेमें भविष्यत्में होनेवाली घटनाका यथा-

(९) एक व्यक्ति को स्वप्न आया कि उसकी भौजाई बेहोश पडी है वह घबरा गया प्रातः ही उसने अपने दूसरे भाईको जिसके पास वह थी पत्र लिखा कि मुझे यह स्वप्न आया है और बडी चिन्ता है आप तुरन्त पता दें, कि क्या बात है। उसने उत्तर दिया कि जो तुमने लिखा है ठीक है, यहां वह लग भग दो घण्टे बेहोश रही और मुझे

स्कूल से बुलाया गया, मैं जा कर हकीम को लाया उसने नसवार दी तब जा कर बडी कठिनता से उस को होश आई। परमात्मा ऐसा दृश्य किसी को भी न दिखाए। व्यक्ति लाहौर में था, उसकी भौजाई लुध्याने में थी।

(१०) एक व्यक्ति को स्वप्न आया कि उस के सामने एक बच्चे का मृतक शरीर पडा है। लगभग एक महिने के पीछा उस का बच्चा मर गया।

उपरोक्त दश स्वप्नों से पता चलता है कि स्वप्न में दूर देशस्थ पदार्थ कालदर्शन हो सकता है। भविष्यत में होनेवाली घटना का ज्ञान हो सकता है। सिद्धों के जो सूर्यलोक, देवलोक में हैं, दर्शन हो सकते हैं, पितरों के दर्शन हो सकते हैं। इस के अतिरिक्त यह भी पता चलता है कि अन्तरिक्ष में मृत आत्मायें कुछ दिन तक स्वतन्त्र विचर सकती हैं फिर स्यात् जन्म ले लेती हैं। इस समय में वह दर्शन दे सकतीं हैं। पितर अपने आप दिखाई दे जाते हैं बिना स्मरण किये भी, विशेष घटनाओं की सूचना देने के लिये। देव आवाहन किये जा सकते हैं तथा स्वेच्छा से भी दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं, ऐसे ही पितर भी स्मरण करनेपर प्रकट हो जाते हैं।

यह स्वप्नविचार यहां इस कारण किया गया कि भक्तों के प्रणव जापसे जब मनपर प्रभाव पडता है तो " उ " मात्रा सिद्धि की पहिचान अन्तरिक्षस्थ आत्माओं से सम्बन्ध जुडजाना ही हो, इसी कारण विस्तार से यहां स्वप्नविषय लिखा गया। क्योंकि यह भक्तका मार्ग ठीक होनेकी सूचना है सच्छे दिव्य स्वप्न आना सिद्ध करता है, कि वह सत्य पथपर पदार्पण कर चुका है। इत्यादि यह विषय बडा रोचक है पर अभी यहीं बन्द करते हैं।

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना: ।

(कविता)

(कवि– श्री० हलियाराम कश्यप, ऐम. ऐससी.)

सृष्टिकर्त्ता देवजी, प्रेरक बुद्धि प्राण ।
ओ३म्कार व्यापक प्रभु, रक्षक जीवन जान ॥१॥
दुःख सकल दुर्गुण सभी, दूर भगाईए आप ।
सकल भद्र कल्याणसुख, हमें दिलाईए आप ॥२॥
विद्यमान थे पूर्व ही, ज्योति वीर्य सुमहान् ।
प्राणि अप्राणि जन्मसे, जगरक्षक भगवान् ॥३॥
एकानन्दस्वरूप वह, द्यौः भूमि रहे थाम ।
श्रद्धा आहुतिसे उन्हें, करूं सभक्ति प्रमाण ॥४॥
देते आत्मज्ञान हो, बल शारीरिक साथ ।
देव उपासें आपको, सभी मानते शास ॥५॥
आश्रय अमृत आपके, उत्तम मोक्ष सुस्वाद
मृत्युः अकृपा आपकी, जनता पाये विपाद ॥६॥
आनन्दरूप उन देवको, भजूं मैं सह अनुराग ।
सुखदाता भगवान् को, दूं उत्तम हविभाग ॥७॥
श्वास खींचते छोडते, नेत्र खोलते मींच ।
ऐसे प्राणीसमूह पर, राज्य करें जो ईश ॥८॥
अपनी महिमासे, बने राजा कुल संसार ।
प्रभु अकेले स्वयं ही, सब जग पालनहार ॥९॥
दो पगवाले खग मनुज, चौपाए गो अश्व ।
इत्यादि सब राज्य में विचरें उनके सहर्ष ॥१०॥

उन सुखस्रोत सुभद्र को, भजूं न क्यूं दिन रैन।
श्रद्धा भक्ति प्रेमसे, आहुतिसहित सुबैन ॥११॥

तीक्ष्णस्वभाव आदित्य अरु, विस्तृत भूमि कठोर।
रचे लोक आकाशमें, उत्तम मध्यम घोर ॥१२॥

दो परमाणु बीच जो, व्याप रहा आकाश।
स्वर्ग तथा अपवर्ग भी, ईश करें सम्प्रकाश ॥१३॥

उन सुखमय भगवान् को, ध्यावें हम सप्रेम।
घृत समिधा हवि आहुति, दिया करें नितनेम ॥१४॥

नहीं घेरे सब ओरसे, तुम बिन अन्य हे देव।
प्रजापते परमात्मन्! सभी भूत सत्यमेव ॥१५॥

इस प्रसिद्ध उत्पन्न सब, प्रजा को तुम रहे धार।
रयि उत्तम ऐश्वर्य धन, दीजिये जगकर्त्तार ॥१६॥

आवाहन करें आपका, जिस इच्छा को धार।
सिद्धि हमारी हो वही, कृपा करो दातार ॥१७॥

वही बांधता प्रेम में, भ्राता जनक समान।
अपने, हमें, सुबन्धुवर, स्नेही मात समान ॥१८॥

धारे रीति विशेषसे, जाने जन्मस्थान।
नाम धाम सब जानता, तीनों लोक महान् ॥१९॥

देव जहां सुखी विचरते, भोगें मोक्षानन्द।
उसी तीसरे स्थानमें पाइये ब्रह्मानन्द ॥२०॥

रयि निमित्त चलाइये हमें सुपथ सर्वज्ञ।
सकल हमारे कर्म को, जाने देव सुप्रज्ञ ॥२१॥

पाप हमारा फूंकिये, तथा कुटिल आचार।
नमः कथन उच्चारते, हम तव बारम्बार ॥२२॥

पांचवीं झांकी ।

इस विषय के पहिले तीन भागों में एक ही भक्त से संबंधित घटनाऐं वर्णन की गईं थीं और चौथे में उसी व्यक्ति के स्वप्नों का वर्णन किया गया था । अब इस पांचवें विभाग में लेखक को जो किन्हीं महात्माओं के सङ्ग में आने से उनके चमत्कार प्रतीत हुए हैं, उनका वर्णन किया जाता है यथा—

एक महात्माने लगभग गतवर्ष शरीर छोडा है उनकी महिमा वर्णन करना लेखक अपना कर्तव्य समझता है ।

(१) जब लेखक उनके सत्सङ्गमें जाता था तो ऐसा प्रतीत होता था कि कोई महान् आकर्षक शक्ति उसको खींचे लिये जा रही है और वह लगभग वायु पर ही उडा जा रहा है। उसकी गति उसकी साधारण चालसे अवश्य कई गुणा अधिक हो जाती थी। जब सत्सङ्गकी समाप्तिपर लेखक वापिस घर लौटता था तो वही शक्ति उसे दूरतक उतनी ही फुरती से पहुंचा जाती थी।

(२) जब भी लेखक का मन कुछ भी एकाग्र होता चाहे लेख लिखनेके आरम्भ में चाहे वैसेही चुप बैठने में तो तुरन्त उसका शरीर झूलने लग जाता और उसे ऐसा प्रतीत होता कि कोई अन्य बाहर की आत्मा उसे इस प्रकार प्रभावित कर रही है जब उक्त महात्मा सहस्रों मीलोंपर भी जा रहे तब भी यह बराबर जारी रहा, अन्त में उसकी मृत्यु के तीन चार दिवस पीछे एक रात्रि बहुत बलपूर्वक तथा चिरकाल तक झूला रहकर मानों उन की मृत्यु की सूचना देकर बन्द हो गया फिर चिरकालतक बंद रहा ।

(३) दस मिनट के लिये ध्यान जमाने का कार्यक्रम पीछे से उन के सत्सङ्ग में आरंभ कर दिया गया था। उस में मैं ने यह विचित्र बात देखी कि आंखें बंद होते हुए भी मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे बहुत आकर्षक मिकनातीसी सुई जैसे लोहे को अपनी ओर खींचती है वैसे ही मेरे मस्तिष्क पर बडी आकर्षिक ज्योतिकिरण अथवा मिकनातीसी या विद्युत किरण प्रभाव डाल रही है और फिर मुझे छोड आगे चल देती है, यह अनुभव बडा स्फुट था ठीक जैसे घडी की सुई घडी के डायल पर प्रत्येक अङ्क पर हो हो कर आगे जाती है ठीक उसी प्रकार मानों उस महात्माकी आत्माकर्षक किरण बारी बारी प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति के मस्तक पर पड मेरी बारी आनेपर मेरे मस्तक पर भी पड आगे मुझसे अगलों पर जा पडती है।

(४) एक रात्रि लेखक उस से रुष्ट होकर आने लगा तो उस ने उपस्थित व्यक्तियों में उसके जाते जाते ही कह डाला कि देखो यह अपना आहार भी ठीक नहीं करता अर्थात् भोजन के विषय में भी यह अपने मन को वश में नहीं करता। लेखक विस्मित हुआ कि उसको यह कैसे पता लगा क्योंकि जहां तक मुझे ज्ञान है न मैंने और न मेरे किसी जानकारने उसे यह बताया हो सकता है।

(५) लेखकने उसे कहा कि क्या आप किसी की आंतरिक, आध्यात्मिक दशाका पता स्वयमेव लगाकर उसे आगे चलानेका यत्न करना पसन्द करेंगें ? उसने कहा यह आशा न करो कि कोई अपनी सिद्धि शक्तिसे तुम्हारे अन्दर की अवस्था जान तुम्हें आगे चलाएगा। मैं ने कहा मैं परीक्षा नहीं करता मेरी वास्तव में दशा यह है. कि मैं स्वयं ठीक ठीक वर्णन नहीं कर

सकता, कभी मैं अपनेको बहुत उच्च और कभी नीच समझता हूं। उसने कहा क्या तुम उसके आदेशानुकूल आचरण करना चाहोगे। मैं ने कहा इसके लिये भी शक्ति वह स्वयं ही देगा। तब उसने कहा अच्छा अलग समय ले लो। आठ बजे का समय मुझे स्यात् आगामी मंगलवारका मिल गया।

मैं उनसे उस समय मिला तो उन्होंने कहा 'तुम उनकी न्यायीं नहीं हो जिनमें शक्ति नहीं होती वरञ्च शक्ति तुममें है, परन्तु तुम उसे वशमें नहीं रखत इस लिए तुम जब एकांतमें ध्यान आदिके निमित्त बैठो तो अपनेको सर्वथा अपने वशमें करो, अनुभव करो कि मेरा शरीर, मन आदि सब मेरे वशमें है और वास्तवमें उसे वश करो केवल कहने मात्रकी आवश्यकता नहीं वास्तवमें ऐसा करो। दूसरी बात यह कि तुम केवल उसीसे मिलो जिससे अपनी सम्मतिमें तुम कुछ सीख सकते हो और उससे वही विषय सीखने के लिए हो उसके पास जाओ और उससे उस विषयके अतिरिक्त अन्य विषयका कुछ न पूछो' अन्य विषयके ज्ञातासे अन्य ही भिन्न विषयका प्रश्न न पूछो। तीसरा यह कि उद्यानादि में भ्रमणादिके निमित्त गए हुए तुम सर्वथा स्वतन्त्र विचार सकते हो, वहां तुम्हें खुली छुट्ठी है तब उस प्रकृति (Nature) से (Divinity) परमात्मानुभव तुम्हारे अन्दर अपने आप घुसेगा।

मैं उसके मुखसे अपना यह चिकित्सासूत्र सुनकर विस्मित रह गया कि किस प्रकार इसने मेरी आंतरिक अवस्थाको जान कर यह चिकित्सासूत्र ग्रन्थन किया है जो मेरे विषयमें सोलह आने सच्चा है।

वह महात्मा प्रत्येक व्यक्तिको उसकी दशाके अनुकूल भिन्न

भिन्न साधन परमात्मध्यानके बतलाया करता था।

(६) उस महात्माकी सबसे विचित्र बात यह थी कि लगभग दो घण्टे कभी प्रतिदिन और कभी तीसरे चौथे दिन वह सत्सङ्ग में जो प्रश्नकर्ताओंके प्रश्नोंके उत्तर देता था वह ऐसी फुरतीसे, शांतिसे बिना सोचे, और सच्चे देता था कि उपस्थित मुग्ध हो जाते थे कि न जाने इसने सरस्वति सिद्ध कर रक्खी है क्या? इस लोक परलोकसम्बन्धि कोई प्रश्न आध्यात्मिक विषयका चाहे कितनाही गहरा पूछो उत्तर तुरन्त उतनाही स्वच्छ, निर्मल, सत्य, गम्भीर मिलता था। सभी विस्मित रह जाते थे।

(७) जिस रात्रि मैं उनसे रुष्ट होकर आया मेरा पक्का विचार अगले दिन भरमें होगया कि अब मैं इन के पास नहीं आया करूंगा। परन्तु संध्या समय जब मैं भ्रमण के लिए अपने घरसे निकल माल रोड हाल रोडके चौरस्ते पर मोटरें गुजर लेने देनेके लिए एक मिंटके लिए ठहरा तो दिलने हाल रोडकी ओर ही पांओं चला दिए ओर में महात्माके पास ही प्रतिदिनसे सात मिनट पूर्व पहुंच गया और अन्य साथी प्रायः २४ मिंट देर करके आए। उस दिन महात्माने व्रत भी किया हुआ था, ऐसे समय इस प्रकार जो प्राय: ३१ मिंट का उनका सत्सङ्ग मुझे उस रात्रि मिला, वह वास्तव में भाग्य की ही बात थी। बडा आनन्द उस रात्रि आया वह भी पूरे प्रसन्न हुए और उन्होंने मुझे उस समय आनन्द अपने अन्दर से बाहर भेजने, बाहरसे अपने अन्दर ले जाने अपने, अन्दर ही विद्यमान अनुभव करने, औरोंको आनन्द बाटने आदिके परीक्षण सभी करवा डाले और आदेश किया कि इसे अब अन्योंको बांटना; नहीं तो इसे गंवा बैठोगे। मैंने बांटनेका यत्न किया पर कुछ अशुद्धि

रह गई सो मुझे भय पडा कि कहीं मस्तिष्क न फट जाय। मैंने तुरन्त बांटना छोड दिया।

चाहिए तो यह था कि उनसे इसका पूरा वर्णन करके अशुद्धि ठीक करवाता पर वह मैंने न किया और अन्य प्रकार ही करता रहा जैसे चुप रहना जिससे शरीर भूलता और उसीमें मस्त रहना। इस लिए एक बार उसने सत्संग में यह कहा भी कि मैंने इसे आनन्द दिया और कहा कि बांटना इसने नहीं बांटा और गंवा बैठा है। वास्तवमें उस रात्रि उसने चित्त मेरा टिका दिया, आनन्द दिया, बाहरसे शक्ति, शांति (Peace) अन्दर आती, अन्दरसे बाहर जाती, अन्दर ही उठ अन्दर ही रहती और अन्दरसे उठती न बाहर जाती, अन्दर बाहर एक रस भर रहा अनुभव करा दिया। वास्तवमें वह उच्च कोटिका महात्मा था।

(८) अन्तिम दृश्य वह स्वप्न अथवा दिव्यदर्शन हैं जो उनकी मृत्यु के तीन चार दिन पीछे एक रात्रि को मुझे हुए। उस समय मैंने समझा नहीं या अशुद्ध समझा पर प्रातः ही जब मैं भ्रमण के लिए गया तो एक उनके सत्सङ्ग में जानेवाले साथी ने मुझे उनकी मृत्यु का शोक-समाचार सुनाया तब मुझे ऐसा लगने लगा कि स्यात् यह स्वप्न इसीके सूचक हों। क्योंकि एक में तो लम्बी पतली टांगों भुजाओंवाला व्यक्ति मरोडा तरोडा हुआ एक ओर फैंका मृतक पडा है। यह तो आधे लेटे हुए अर्द्ध निद्रित अवस्था में दिखाई पडा। और दूसरा सूर्य से कहीं अधिक तेजोमय हिरण्यगर्भ का केवल एक किनारा दिखाई पडा जिससे बडी प्रकाशमान किरणें छूट रही थीं। यह दर्शन बैठे हुए हुआ जब मैं भक्तिमें भरकर भगवान् पतञ्जलि हिरण्यगर्भ, भोज महाराज, व्यास, भगवान् वाचस्पति मिश्र विज्ञानभिक्षु आदि योगप्रवक्ताओं को बारंबार नमस्कार कर रहा था और सभीको हिरण्यगर्भ का ही

अवतार समझ कर आनन्द लूट रहा था।

(९) उन महात्मा के सत्सङ्ग में जानेका एक यह लाभ भी अनुभव किया गया कि स्वप्न अथवा दिव्यदर्शन बहुत होते थे दूसरी चौथी रात कोई न कोई आनन्ददायक अथवा सच्चा स्वप्न अवश्य आ जाता था और आत्मा प्रात: जागनेपर उसका स्मरण कर बडा प्रसन्न होता था।

(१०) उनकी सत्सङ्गतिमें यह सब कुछ, मेरे अनुभव में आया अन्य साथियों के अनुभवमें जो आया तथा जो ज्ञान प्रश्नोंके उत्तर में उन महात्मा ने बांटा वह मैं यहां नहीं लिखता। वह एक पुस्तक की सामग्री अंग्रेजी में पीछे छोड गये हैं जो उनके एक भक्त ने छपवा भी दी है।

इन महात्मा का शुभ नाम बुद्धाऽदेश था। लाहौर में अमेरिकन स्वामी करके भक्तों में प्रसिद्ध थे। २४ वर्षकी आयुमें अमरीका से भारत आये केवल ब्रह्मविद्या बांटने। अपने माता पिताके एक ही पुत्र थे उनसे प्राय: विरुद्ध हो ही आये थे पर अब मातापिताने आज्ञा दे दी थी कि यदि तुम यही समझते हो कि भारत में तुम अधिक उत्तम कार्य्य कर रहे हो तो वहीं रहो, हम अब तुम्हारे पथमें अडचन न डालेंगे पर उन विचारोंका क्या पता था कि उनका बालसंन्यासी भक्तराज पुत्र ब्रह्मचारी ही प्राणत्याग देगा। वह एक आध रुपया ही रखते थे वह भी आवश्यक नहीं था। वे बतलाया करते थे कि एक दो सन्तरे आदि खाकर भी कई दिन मैंने बिताए। पहाडों में लंगोटबन्द रूपमें भी वे विचरे। व्रत भी महात्मा गांधीके व्रतकालमें एक बार किया। पालिटिक्स पर सर्वथा नहीं बोलते थे, हां यदि कोई महात्मा गांधीकी असिद्धि (failure)

कह बैठता तो कहते कि शताब्दियों के वर्णन में भारतभाग्यवर्णन करते समय पता लगेगा कि कितना महान कार्य इन्होंने किया है इत्यादि ।

अवश्य ऐसा ब्रह्मचारी भक्त परमात्माको मिला हुआ होता है वह सच्चे अर्थमें वेदान्ति थे नवीन वेदान्तके कट्टर विरोधी। यही कहते कि 'अहं ब्रह्मास्मि ' कह कर ही भारतवासियोने अपना सर्व नाश कर डाला है । वेदान्तके दुरुपयोगनेही सब स्वाहा कर दिया है। वह अकर्मण्यताके घोर विरोधी थे। परमात्माका कार्य करनेकी आज्ञा अवश्य करते थे। Simply let go तथा ' Be alert ' अर्थात् केवल अपने विचार यत्न आदिको त्याग कर सर्वथा शान्त हो जाओ यही ध्यान है और चेतन रहो। अतीव चेतन जिससे कि जो भी विचार उठे उसके जालमें उलझनेसे पूर्व ही उसे तुरन्त वहीं रोक दो उठना ही उसका बन्द कर दो । यह दो सूत्र परमात्माध्यानके विषयमें मानों उनके गुरुमन्त्र थे। ध्यान-समय सर्वथा अपनेको भगवद् अर्पित कर दो।

एक और महात्मा का अब मैं वर्णन करता हूं । वह मुझे रेलमें मिले थे और मेरा पता लिखाकर कहा कि मै स्वयं ही तुम्हें मिलूंगा। कुछ वर्ष पीछे लाहौर मुझे आ ढूंढा। मैंने उन्हें भोजन आदि कराया दोपहर को अपने पासही लिटा छोडा और शामको उनकी इच्छानुकूल उनको छोडने भी उन के स्थान पर गया। जो ४-५ मील दूर था। वहां बैठे बातें कर रहे थे तो मैं रह रह कर अपनी बायें हाथ की हथेलीको दाहिने हाथ की अङ्गुलियोंसे दबाता था तो आप बोले " ज्यादह दुःखदा है " (क्या बहुत दर्द करता है) मैं तुरंन्त बोल उठा आप ज्यादह दर्द की बात पूछते हैं मैं दस दिन से स्नान भी नहीं कर पाया। वे बोले " कोइ न राम

आजाऊ' अर्थात् कोई बात नहीं आराम आ जायगा । जब मैं लौटने लगा तो मुझे छोडने नीचे तक गये और बाहर रस्ते पर विदाई के समय पीठपर हाथसे थपकी देकर बोले 'देह काया नीरोग 'मैंने तो कहा कि इतनेसे ही काम नहीं चलता वरञ्च महात्माजी हमें तो और बहुत कुछ चाहिए, परन्तु मुझे इस आशीर्वाद के अर्थ तब पूरे समझ पडे जब मेरा एक १६-१७ वर्षका पुराना दु:खदायी रोग तक जाता रहा । हाथ तो अगले दिनसे ही काम करने लग गया और मैंने अगली प्रातःही स्नान पूरे आनन्दसे कर लिया फिर खुलता खुलता ५-७ दिनमें हाथ ठीक हो गया । यह वही हाथ था जिस पर प्रति दिन ऐन्टीमैंनिन्जाइटिस की पुलटिस प्रतिदिन उबालकर दस आठ दिन तक बांधते रहनेसे कुछ नहीं बना था और हाथकी हथेली प्रायः दो ओरसे भीतरसे कुचली सी गयी थी, वास्तव में उस महात्माका मुझसे बड़ा प्रेम है। वह प्राय: ६०-६५ वर्षका श्वेत दाढी जटायें रखे भस्म रमानेवाला महात्मा है ।

एक और महात्मा इसी आयुके बडे सुन्दर सुडौल मुझ पर कृपा करते रहे हैं, उनकी अब तक तो यही बात देखी है आगे जब खुल खेलेंगे तो सम्भव है कुछ दिखलाएं वह बात निम्न है—

मै उनसे मिला, बातें हुई आज्ञा हुई कि कोई प्रोग्राम (समय विभाग) बनाकर आठ दिन तदनुकूल आचरण कर फिर मिलना इससे पहिले न मिलने आना, नहीं तो आगे बताएंगे भी नहीं। मैं तो चला आया, आगली सायं मैं अपनी लगभग ३ वर्षकी बच्चीको गोदमें लिये घरसे निकाला कि टैम्पल रोड लारैंस रोडके चौरास्ते पर टैम्पल रोडसे आते वह दिखाई पडे साफ था कि

मिलना चाहिये। दो तीन घंटे पासके ही एक चौबारे में उनके हरी-कीर्तनका आनन्द उठाया। उन्होंने कहा कि मैं ने तो कहा था कि आठ दिनसे पहिले मत मिलना मैंने उत्तर दिया कि आप ही मिले हैं मैं तो नहीं मिला इत्यादि। अगले दिन या एक दो दिन पीछे फिर वही बात। मालपर छावनी की ओरसे वह आ रहे थे, मैं घरसे निकल माल पर आया था कि भेंट हुई। फिर भी लारैंस बागमें एक दिन भ्रमण के लिये गया तो वह स्यात् छावनी की ओरसे ही लौट रहे थे कि फिर भेंट हुई। मैं प्रातः भ्रमण के लिये गया कि लाटसाहिब की कोठी के इधर ही भेंट हुई। मैं विस्मित था कि कौनसी ऐसी सिद्धि है जिसके द्वारा भिन्न भिन्न स्थानों भिन्न भिन्न कालोंमें मुझे वह इस प्रकार अचानक मिलते हैं! बिना पहिलेसे आपसमें समझौता होनेके कि अमुक स्थान अमुक काल तुम आ जाना मैं तुम्हें मिल सकूंगा। अवश्य हार्दिक् आकर्षण ही यहां कारण है।

इस हार्दिक् आकर्षण के कुछ उदाहरण और देता हूं। जो दो इसी रस्ते के पथिक व्यक्तियों में घटे हैं। मैं दो तीन बार भ्रमण के लिये निकला तो भ्रमण के स्थान में एक मित्र के घर चला गया, जिसने बताया कि अमुक कारण वश आपको स्मरण किया था और आप आ गये। एक और मित्र को मिलने गया तो उन्होंने बतलाया कि कल मैं आप को मिलनेको बहुत ही उत्सुक रहा स्यात् मेरी उसी इच्छाका फल है कि आप आ गये। इसीसे पता चलता है कि जब यहां पर ऐसा हो सकता है तो परमात्मा से की गई प्रार्थना कब व्यर्थ जा सकती है? केवल हम घबरा जाते हैं। अमेरिकन स्वामिने लाहौर अन्तिम बार त्यागने समय एक लाहौर निवासी भक्त के साथ एकत्र ब्रह्मानन्द-अनुभव करने के पीछे

बिदाअगी के समय उससे प्रेमालिङ्गन किया। मेरा तभी से उस भक्तको मिलने को बहुत दिल चाहता था, परन्तु उसका नामधाम मैं कुछ नहीं जानता था।

एक दिन मैं उससे मिलनेकी तीव्र उत्कण्ठा के कारण उक्त दूसरे मित्र से उसके मकान का पता पूछने गया कि वहां जाकर उससे मिलूं। मैं विस्मित हुआ जब मैं ने उस भक्तको ही उस दूसरे मित्र के यहां बैठा पाया। मैं ने कहा आप चलेंगे। वह चल पडा। अस्तु हम कई घण्टे एकत्र रहे, जिन का वर्णन मैं इस लिये नहीं करता, कि वह सर्वथा गुप्त रहना चाहते हैं। उसके पीछे मुझे भ्रमण करते वह मिले। ऐसे एक दोबार मिले। पर एक दिन मैं और एक मित्र उनकी तलाश में नहर पर घण्टाभरके लगभग ढूंडते फिरे जब निराश लौटे तो अगले दिन भ्रमण में मुझे अचानक मिल बोले कि जब मैं इतने प्रेम से आपको खींचता हूं तो यह कैसे हो सकता है कि तुम न खिंचो। यह इस लिये कहा क्योंकि मैं ने उन्हें उपालम्भ दिया था कि कल आपकी तलाश में हम नहर पर भटकते फिरे।

एक और मित्र के विषय में मुझे विचार आया कि उन्हें बुलाऊं वह थोडी ही दूर अपने मकान पर थे कि चले आये और बतलाने पर बोले कि मुझे भी अभी विचार आया था कि आपसे मिलूं। एक और मित्रका घर उधर है जिधर मैं भ्रमण के लिये जाता हूं। बहुधा मैं उन्हें जा घर पर मिल आता हूं। एक बार मुझे वह बहुत दूर आगे आ मिले और कहीं जा रहे थे। एक बार उनको मकान पर न पाकर मैं लौट रहा था कि वह कहीं से मोटर में लौटते मुझे मिल गये और वापिस घर ले गए इत्यादि। आकस्मिक भेंट जो दो की परस्पर इच्छा से अथवा एकको ही तीव्र उत्कंठसे

भिन्न भिन्न काल तथा देशकी परिस्थिति में पहिले परस्पर समझौता होनेके विना होती है इससे भी यह अवश्य पता चलता है कि कुछन कुछ आत्मिक जागृति अवश्य हो चुकी है अथवा दिलका खिंचाव दो व्यक्तियों का परस्पर अथवा एकका ही दूसरे के प्रति अवश्य है।

इसी प्रकार की एक और बात यह भी होती है कि जहां आप का प्रेम अधिक हो वहां चिठ्ठियें Cross बहुत करती हैं, अर्थात् आपने इधर से चिठ्ठि लिखी है उसी समय उधरसे उत्तर में चिठ्ठि लिखी गई है जैसे कि आप की चिठ्ठिका भाव मानसिक विद्युतद्वारा ही वहां पहुंच कर उत्तर ले आया हो। मुझे इसमें यह अडचन पडती है कि इस तरह चिठ्ठियां Cross हो जाने से सांसारिक रूप में उत्तर न वह मेरे पत्र का दे पाते हैं और न मैं उनके का। दोनों के पत्रों का उधार ही दोनों के सिर रहता है। यह सांसारिक दशा में वहां होता है जहां प्रेम अधिक हो और हार्दिक आकर्षण प्रभाव कर रहा हो। साधुओं की दशामें तो प्रायः पत्रव्यवहार होता ही बहुतकम है।

इस लेख में महात्माओं तथा भक्तिमार्गपर पदार्पण करनेका यत्न करनेवालोंका चारु चरित्र वर्णन कर मैं इस लेख को समाप्त करनेके लिये परमात्मध्यानके कुछ सरल उपाय वर्णन करनेही उत्तम समझता हूं वे ये हैं—

एक सरल उपाय परमात्मा का अनुभव लेने का यह है कि परमात्माके किसी एक नाम का अर्थ विचारा जाय। जैसे परमात्मा का एक नाम सर्वव्यापक है इसके अर्थ हैं सबके अन्दर बसा हुआ। अब इसी एक भाव को अनुभव करने का यत्न करना चाहिए। जैसे जो भी पदार्थ सामने हों उनमें से अकेले अकेलेमें उसे विद्यामान विचारना चाहिये। उदाहरणार्थ लिखते

समय कापीमें, कलममें, निबमें लिखनेवालेके हाथमें, उसके विचारमें तथा उसके लेखमें परमात्मा विद्यमान है यह भाव अपने अन्दर उत्पन्न करना चाहिए। इस प्रकार करने से भी मनुष्य के अन्दर आत्मज्योति जग जाति है क्योंकि ऐसा करते करते किसी शब्द के विचारमें मनुष्य इतना गहरा चला जाता है कि उसको रस मिलने लग जाता है यही परमात्मानुभव है।

इसी प्रकार का एक उपाय यह भी है कि मनुष्य सृष्टिकी विविध, विचित्र रचनाका वर्णन करता, सुनता हुआ उसमें परमात्मा का अनुभव ले। जैसे एक ही भूमिभाग में उगा हुआ ईख उस भूमिमें से मिठास उत्पन्नकारक द्रव्य चूस लेता है और उसी में वहीं पासही उगी लाल मिर्च उसीमें से तीखापन उत्पन्नकारक द्रव्य चूसती है। यह उस भगवान् की ही सत्तासे है। नीमके पत्ते कडवे होते हैं कच्चा फल भी कडवा होता है, परन्तु पक्का फल मीठा हो जाता है। उसी पृथिवी माता के अन्दर जल तथा आग विद्यमान हैं।

पत्थर और अबरक एक दूसरेसे सर्वथा विभिन्न एकत्र मिलते हैं। अबरक की बारीक तहें खुलती जाती हैं, पत्थर एक ही लम्बी चौडी मोटी शिलाके रूप में होता है। एक से दूसरे तक दर्जे मिलते हैं। विचित्र लीला है उस भगवान् की जो पद पद पर ऐसा विपरीताचरण दिखला रहा है। वही जमीन अपने अन्दर से शीत काल में उष्ण जल स्नान के लिये देती है और गर्मी में शीतल जल। वह महान् प्रभु मानो सर्दियों में भूमि को ही हमाम बना देता है कि आलसी पुरुषों की भी स्नान में रुचि बनी रहे। भगवान् की विचित्र माया देखो कि वैसे अन्तरिक्ष खाली प्रतीत होता है पर जब एक छेदमें से सूर्यकिरण अन्दर आती हैं, तो उसी आकाश में

अनगिणत त्रसरेणु नाचते दृष्टिगोचर होते हैं ।

सूक्ष्मदर्शक यन्त्रसे देखते हैं तो पत्ते के बाहर की एक ओरकी झिल्ली (बारीक) जो रूपरंगसे रहित ही साधारण आंखसे दीखती है; वही वहां एक लम्बी चौडी चादर जिस में अनेक कोठडियां हैं ऐसी प्रतीत होती है। यह उसका वास्तविक रूप है केवल कई गुणा बडा होकर दीख रहा है । तब पता चलता है कि भगवान् ने बनाया हुआ कुछ है और हमें दिखा कुछ और ही रहा है। तब उसको मायावी छलिया कहे बिना रहा ही नहीं जाता। तब संसार मिथ्या मायामय है यह सर्वथा सत्य प्रतीत होता है।

(नोट) [फिर इससे भी आगे उन कोठडियों की दीवारोंकी वास्तविक रचना कुछ और ही है सो भगवान् ही जानता है।] चाहे कितनी भी बडी शक्तिवाला सूक्ष्मदर्शक यन्त्र प्रयोग में लाओ मनुष्य के बीज अर्थात् स्त्रीके अण्डे की रचना में अन्य प्राणियों के इन्हीं तत्त्वों की अपेक्षा बहुत ही नाममात्रका भेद दृष्टिगोचर होता है। उसके विरुद्ध वह जिन प्राणियों को जन्म देते हैं उनमें जो महान् अन्तर होता है, वह देखने के लिये केवल एक बार चिडियाघर हो आना भी काफी हो सकता है, परन्तु इन प्राणि-बीजों में इतना महान् अन्तर उस विचित्र महिमामय देवने, कौन जान सकता है कि कैसे कर दिया !

यहां फिर मनुष्यकी दृष्टि उसे सर्वथा धोखा देती है। भगवान्की माया उसे मायावी कहाती है कि दिखता एकसे है पर न जाने कहां भिन्नता तथा परस्पर विरोध भर रखा है कि वैसे ही बीजसे मनुष्य, शेर बकरी, गौ कुत्ता गीदड भेडिया आदि परस्पर भक्षक भक्ष्यरूपमें तथा सर्वथा विपरीत गुणोंवाले उपज उठते हैं; बडी विचित्र लीला उस लीलामय भगवान् की है। इस

प्रकार के सृष्टिसम्बन्धि विचारोंसे भी कभी गहरा उतरा जा सकता है । भगवान् वास्तव में हृदय को छू जाता है ।

एक उपाय परमात्मा के आनन्द लेनेका यह भी है कि सर्वथा मनुष्य सब क्रियाओं तथा विचारों तथा वृत्तियों का रोक दे; और कुछ भी न सोचे बिल्कुल स्वस्थ हो जाए आराम से दिल चाहे लेट जाय चाहे आराम कुर्सीपर बैठ जाय इस प्रकार सर्वथा शान्त हो जाए तो भी अन्दर से शान्ति, सुख, आनन्द आने लग जाता है वह परमात्मानुभव होता है ।

इस प्रकार भी कभी कभी हो जाता है कि मनुष्य अपनी प्रियतमा अथवा प्रिय बन्धुसे प्रेम में मस्त है उस समय उसका चित्त अचानक बातों बातों में भगवान् की ओर जाकर उस को भगवान् का आनन्द आने लग जाता है ।

कभी पुस्तक पढते ही आदमी की टिकी हुई वृत्ति अचानक परमात्मा का विचार आ जाने से उस में उलझ कर ब्रह्मानंद भोगने लग जाती है ।

वेदोंके पुरुषसूक्त, अथर्वका स्कम्भसूक्त, ऋग्वेद के वाग् तथा इन्द्र वैकुण्ठ सूक्त, नासदीय सूक्त, कःसूक्त इत्यादि श्वेताश्वतरका उपनिषत् काव्य, गुरुदत्तकी माण्डुक्योपनिषत् व्याख्या तथा आत्म-विचार इत्यादि पवित्र पाठ भी आत्मतत्त्व से भेट करा देते हैं, मनुष्यको वास्तविक आनन्द दे देते हैं ।

सूर्यभगवान्‌के दर्शन करते हुए हिरण्यगर्भ सविता आदित्य महान् आदि की स्तुतिका मन्त्र पाठ आनन्द में भर देता है ।

विज्ञान के किसी भी विभाग की बी० ए,० एम० ए० की थ्यूरी

(उसके दर्शनविभाग) की पुस्तक पढकर उसे वास्तविक अनुभवमें लानेका प्रयत्न करनेसे परमात्मविश्वासी को भगवान् तुरन्त स्मरण हो आता है । विशेष कर जब सृष्टिरचना का वर्णन विज्ञान वेत्ता करते हैं और उसके कारणों की खोज करते करते सब सूक्ष्मातिसूक्ष्म पारदर्शी यन्त्रोका पूरा प्रयोग करनेके पीछे मुक्त कण्ठ से स्वीकार करते हैं कि जितना विज्ञान अधिक बढता है, उतना ही वैज्ञानिक अपनी अज्ञानता घटने के स्थानमें और बढी हुई पाते हैं । उस समय आप्त वैज्ञानोकोंके सामने श्रद्धासे सिर झुक जाता है और जिह्वा कह उठती है कि जो भगवद् दर्शन ये वैज्ञानिक करते हैं वे विद्याविहीन जन स्वप्न में भी नहीं कर सकते ॥

छठी झांकी ।

परमात्मध्यान के छठे भागमें पहिले कुछ ऐसी विचित्र बातें वर्णन की जाती हैं जिन से अगले पिछले जन्मों का पता चलता है। योगसिद्धियों में एक सूत्र आया है 'संस्कारसाक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम्' कि संस्कारों के साक्षात् करने से पूर्व जन्म में कोई कौन था इस का पता लग जाता है। मुझे यह तो नहीं पता है कि मैं पिछले जन्म में कौन था और न मुझे यह ही पता है कि संस्कारों के साक्षात् करने का तात्पर्य क्या है और उस की विधि कौनसी है पर मैं अपनी तथा अन्यों की कुछ घटनायें यहां लिखता हूं जिन पर टीका टिप्पणी पाठक अपनी रुचि तथा योग्यतानुसार करने का पूर्ण अधिकार रखते हैं।

(१) तीन चार वर्षकी एक लडकी अचानक एक दिन बोल उठी, 'बीबीजी ! काकेनूं दरया विच सुट आये' अर्थात् काके को नदी में फेंक आये। उस की मांने उसे मारा झिडका पर क्या बनता था ? एक मासके लगभग बीतने पर जिसको वह काका कहा करती थी वह उस की मासीका लडका मर गया और उसे नदी में बहा दिया गया, क्योंकि लाहौर का यही रिवाज है।

कुछ महिने पीछे उसका मासड उस लडके का पिता उन के घर मिलने गया तो उसे हाथ से पकडकर वही लडकी बोल उठी, "मासडजी ! थ्वाडा काका साडे आ बी गया" अर्थात् आपका पुत्र हमारे यहां आभी गया है। उस मनुष्य ने उत्तर दिया कि अच्छा भई जीता रहे, यहां भी हमाराही है। उचित समय पर उसके भाई उत्पन्न हुआ जिसको परमात्मा दीर्घायु करे।

वह मनुष्य उस लडके को देखकर आनन्दित हो जाता है लडका भी छोटी अवस्था सेही उसे प्रेम करता है। इन दो घटनाओं के फलस्वरूप वह अपने मृत पुत्र को मृत मानता ही नहीं केवल पुराने कपडे उतारकर नया सूट पहिन आया समझता है।

ये योगदर्शनवर्णित पूर्व जाति ज्ञान का उदाहरण है।

(२) एक लडकी की शादीपर एक डाक्टर आया हुआ था, जो पुरानी और दुःखदायी क्षयी सदृश व्याधियों की भी चिकित्सा अच्छी कर लेता था। उस लडकी की मासी की लडकी लगभग एक वर्ष से राजयक्ष्माग्रस्त थी। शादी से दो तीन दिन पूर्व उस बीमार के पास से तार पहुंची कि डाक्टर को ले आवें। सभी को बडी चिंता हुई कि अब कैसे करें। अस्तु। एक रात जिस लडकी की शादी थी उसके चचाने अपनी स्त्रीसे कहा कि यह जो बीमार लडकी है इसकी मृत्यु हो जायगी और जिस लडकी की शादी है उस के घर यह पुत्ररूप से जन्म लेगी। कुछ ही दिनों में व्याधिता तो गुजर गयी और जिस लडकीकी शादी हुई थी उस के कालांतर में पुत्र उत्पन्न हुआ।

अब इस से आगे यह जानने का कोई साधन हमारे पास विद्यमान नहीं है कि क्या यह लडका वास्तव में पीछले जन्म में वह रुग्ण बालिकाही था अथवा कोई और।

(३) एक छोटी लडकी को (Hydrophobia) जलोन्माद 'हो गया' यह रोग कुत्ते के काटने के परिणामस्वरूप होता है। बहुत इलाज कराया कुछ न बना। अन्त में उस का पिता लाहौर लाया। क्योंकि वह बहकी हुईसी थी, इसलिये रास्तेमें उसे डाक्टरों की आज्ञानुसार रक्खा गया जिसे उस ने बहुत बुरा माना क्योंकि कभी कभी तो उस को होश ठीक हो ही जाता थी। अस्तु! लाहौर

पहुंच जब वह अपने भाईसे मिली वो उसके गले से चिमट कर बोली कि अब मैं तुम्हारे घर आऊंगी पिताजी के नहीं। उचित समय पर गर्भ हुआ तो स्वप्न हुआ कि लो जी मैं आगई। समय पर वह उत्पन्न हुई। और बडी हो कर अपनी पिछले जन्म की वस्तुओं को देखकर पहचान भी गई।

(४) एक लडकी का भ्राता १३-१४ मास का ही होकर गुजर गया था, उसकी वस्तुएं एक बक्स में से निकाल निकालकर उसकी माता रख रही थी कि लडकी जो तब लगभग तीन वर्ष की थी। कहने लगी 'यह केशो की है' "यह भी केशो की है" अनेक वस्तुएं जो केवल उस लडके की थीं उन्हीं उन्हीं को उठा उठाकर ही वह ऐसा कितनी देर कहती रही। बीच में यह भी कह गई 'यहां केशो आई थी, चाचीके पास केशो आई थी।' उस के मातापिता विस्मित हुए कि यह केशो को कैसे जानती है। उस की मृत्यु तो इस के जन्म से बहुत पहिले हो चुकी थी, इस को कैसे पता चला कि अमुक वस्तु उस की है।

इस का कारण केवल यही है कि यहां बालिका की दृष्टि में काल तथा व्यक्तित्व की सीमा नहीं थी। योग में अतीत ज्ञानका वर्णन आता है, यह उसी का उदाहरण है। यह दिव्य दर्शन का भी उदाहरण है।

इन चार घटनाओं में से दूसरी के विषय में तो यह कहा जा सकता है कि स्यात् उस व्यक्तिने अनुमान कर लिया हो, या स्यात् वह लडका पिछले जन्म में वह लडकी न हीं हो। पर शेष तीन घटनाएं जिनमें सर्वथा अबोध ३-३ वर्ष की बच्चियोंने अपने अथवा अन्यों के अगले पिछले जन्मों का सत्य वर्णन किया है उन पर कोई संदेह नहीं हो सकता है। उन का तो निर्णय केवल

यही हो सकता है कि अभी दुनियां की हवा उन्हें सर्वथा ही बहुत कम लगी होने से अभी उनकी दृष्टि पूरी खुली है जो देश काल व्यक्तित्व आदि का व्यवधान बडे होनेपर पड जाता है वह अभी इन्हें नहीं पडा। इसी विषय की परिचायक एक और घटना नं. ४ वाली लडकी की नीचे और देते हैं, यथा—

(५) एक तीन वर्ष छः दिवस कि आयु की बालिका बडे कमरे में खाट पर बैठी लिख सा रही थी। दीवार के उस ओर साथ का रसोई घर था। उस में वर्तनों की अलमारी में एक पीतलकी छलनी में मटर की फलियां रक्खीं थीं। रसोई की दीवार जिसमें वह अलमारी थी उत्तरदक्षिण थी तो मध्यवर्ती दीवार पूर्वपश्चिम थी। लडकी का मुंह पूर्व की ओर था। उस का पिता पश्चिम की ओर मुख किये मटरकी फली उठा दाने निकाल खा रहा था। इतने में लडकी बोल उठी "तुसीं मटर खाई जाओ मैं तां लिख दी औं" (अर्थात् आप मटर खाते रहें मैं तो लिखती हूं) उसका पिता विस्मित हो गया कि मुंह इसका दूसरी ओर है, मध्य में दीवार है, लिख यह रही है और बोलती यह है।

प्रत्यक्ष है उस को दिव्य दर्शन हो रहा है जिस में दृष्टि सर्वथा खुली होती है। दृष्टिबन्धक कारण कोई जहां नहीं ठहरते दीवार उस के लिए आवरण नहीं, दिशाका वहां बंधन नहीं। परन्तु विचित्रता यह है कि वह अपने काममें लगी है, योग वा समाधि की सार वह क्या जाने ? इसी कारण महात्मा उपदेश किया करते हैं कि शिशु बन जाओ, तो सिद्धि पा सकते हो।

पुस्तकों के उद्धरण तो योगादि से अनेक प्रमाणरूप उद्धृत किये जा सकते हैं, परन्तु उद्देश्य तो इन को सच्चे सांसारिक सत्य, वैज्ञानिक सत्य सिद्ध करना है इस लिये घटनाएं स्वप्नादि ही

इन लेखों में दिये जा रहे हैं, पुस्तकों से प्रमाण एकत्र यहां नहीं करते। यदि सच्ची घटनायें भी रुचि श्रद्धा आदि परमात्मध्यान में उत्पन्न न करा सकें, तो पुस्तकों के उद्धरण क्या कर सकेंगे ?

(६) इसी लडकी को एक दिन शीरीनी उस की माता ने अन्दर के कमरे से लाकर दी। इस ने कहा सारी लूंगी माता ने कहा सारी ही दे दी है। लडकी ने कहा वह जो बाटी में डालकर रख आई हो ? माता विस्मित हो गई, क्योंकि वह वास्तव में बाटी में डाल कर रख आई थी।

इन बच्चोंकी इस दशा से हमें पता लगता है कि वास्तव में ऐसी खुली अन्दर की आंख प्राप्त करना हमारा योग के जिज्ञासुओं का एक ध्येय है। यह वह अवस्था है जहां हमने पहुंचना है। मेरा लिखनेका तात्पर्य यह है कि जिस को यह भी न पता हो कि मैंने जाना कहां है, वह वहां क्या खाक पहुंचेगा ? ये जरा जरा से बच्चे कोई दीवार से परे देख रहा है, कोई अगले पिछले जन्म बता रहा है, कोई कभी के गुजर चुके भाई की वस्तुएं अब पहचान रहा है, यह सब दर्शा रहे हैं कि वास्तविक आत्मतत्त्व वह है जिसके लिये व्यक्तित्व, देश, काल, कोई व्यवधान नहीं बन सके। अपनी आत्मा को उस अवस्था में पहुंचानेके लिये हमें परमात्मध्यान करना है।

इस का एक अति सरल उपाय परमात्मध्यान नं० ५ में दिया जा चुका है। कपिल मुनि के सुन्दर शब्दों में इसे " ध्यानं निर्विषयं मनः " वर्णन किया गया है। भगवान् कृष्ण महाराज ने अपनी मनोहर गीता में सिद्धों में अपनी विभूति कपिल मुनि में ही दर्शायी है, अतः इन महात्मा को परम सिद्ध सिद्धराज आदि

उपाधियों से विभूषित यदि हम करें तो चाहे वे स्वर्ग में हों, चाहे मोक्षधाममें हों, वहीं से उनकी आत्मा-महात्मा अवश्य हमारी ओर आकृष्ट होगी और हमें बिना इस लोक के गुरुओं की सहायता के ध्यान सिद्ध हो जायगा। क्योंकि ऐसे उच्चतम महात्मा मृत जीवित एक से ही होते हैं जैसे कि लेखक के चचा ऐसा कह भी दिया करते थे कि हम ने उस उद्यान (परमात्मा-रूपी) के अन्दर जाकर देख लिया है, भ्रमण कर लिया है, इत्यादि ।

कपिल मुनिका उपरोक्त सूत्र ही वास्तविक गुरुमन्त्र है, जो सभी सच्चे गुरु अपने परम प्रिय शिष्य को साधारण जाप आदि कुछ चिर करवाते रहनेके पीछे, देते हैं । संस्कृत न जाननेवाले अपने देश की भाषा में वही भाव समझा देते हैं और Practically एकबार करवा भी देते हैं। इसे ही भेद खोलना कहा जाता है। स्थूल बुद्धि अविद्वानों को यह दुर्बोध है। हां पुराने जन्म के संस्कार एक-बारगी भाग्यसे जग जायं तो पौबारां उन के भी हो जाते हैं, अन्यथा न जाने उन्हें कितनी चक्की पीसनी पडनेपर भी कार्यसिद्धि हो न हो। न जाने कितने जन्मोंमें हो ? मैं आधुनिक उच्च शिक्षा का यह फल अवश्य समझता हूं कि बुद्धि सूक्ष्म अवश्य हो जाती है, किसी किसी भाग्यहीन की न हो तो यह शिक्षाका दोष नहीं उसके अपने प्रारब्ध का है ।

साधारणतया यह सत्य है कि स्थूलबुद्धि शीघ्र ही परीक्षाओं में अनुत्तीर्ण होने लग जाते हैं। मस्तिष्कमें कोई विशेष शक्ति अवश्य किसी न किसी प्रकार की उत्पन्न हुए बिना उच्च शिक्षा का अधिकारी मनुष्य नहीं बनता। जैसे Research work अर्थात् अन्वेषण वा गवेषणा का कार्य किसी विषय में केवल वही कर

सकता है जिस को उस विषय में तो अवश्य इतनी श्रद्धा प्राप्त हो चुकी हो कि वह उस विषयसम्बन्धि अपने लेखोंमें सर्वथा असत्य का मिश्रण न होने दे। प्रमाणरहित कोई वाक्य न लिखे। ठीक श्रद्धा धर्म के सर्वथा आश्रित हो। तब उसका लेख तद्विषयज्ञ वैज्ञानिकोंमें पढा जा सकता है, अन्यथा न तो यह लोग अपने पत्रोंमें साधारणतया त्रैमासिकोंमें उस लेख को स्थान ही देते हैं और न उस की ओर देखते ही हैं, रद्दी की टोकरीमें ही फैंक देते हैं।

"श्रद्धया सत्यमाप्यते" सत्य श्रद्धाद्वारा ही प्राप्त होता है और उसी से ही तृप्त पुष्ट होता है। यह श्रद्धा किसी न किसी विषय के प्रति जब तक उत्पन्न न हो तब तक कोई वैज्ञानिक अनुसंधानकर्ता नहीं बन सकता और न ही तद्विषयक नवीन सत्य की प्राप्ति उस के द्वारा संसार को कदापि हो सकती है।

ठीक यही सिद्धान्त इसी रूपमें ब्रह्मविद्या तथा योगसिद्धियों के विषयमें पूरा सोलह आने सच्चा है। इसी लिये मैं कहता हूं कि उच्च शिक्षा प्राप्त इस ओर असानी से जा सकते हैं। परन्तु वही विषय जिसमें वह नवीन आविष्कार कर रहे हैं उन के परमात्मा की ओर झुकनेमें रुकावट हो जाती है। लेखक की भी यही दशा है। कई दिनों "वेद और कृमि" शीर्षक लेखमें यह इतना उलझा रहा कि परम देव भगवान् मानों सर्वथा भूले हुए से हो रहे थे कि कल वैदिक धर्मने पहुंचकर स्मरण कराया कि परमात्मध्यान नं० ६ तो अधूरा ही पडा है। तुरन्त वह विचार मस्तिष्क से बाहर किये जिसके लिये

एक रात और कुछ घण्टे लगे और यह लेख पूरा करना आरम्भ किया। तात्पर्य यह कि उच्च शिक्षाप्राप्तों की बुद्धि सूक्ष्म हो चुकी होती है। सत्य की प्राप्ति का साधन श्रद्धा उनके पास विद्यामन होता है, परंतु Orienttion अशुद्ध होती है, दृष्टिकोणमें अन्तर होता है, अपने विषय की अपेक्षा परमात्मा शुष्क नीरस निरर्थक प्रतीत होता है। अतः बहुधा कोरेके कोरे रह जाते हैं। मरने तक भी जीवन मृत्यु प्रश्न का सन्तोषक उत्तर नहीं पाते यह बडे दुःख की बात है।

इस से भी अधिक कष्टप्रद वार्ता यह है कि माया, विज्ञान, सार्थकता, अर्थसञ्चय, नवीन आविष्कार आदिमें ऐसे मदान्ध हो जाते हैं कि लाख समझाओ परमात्माकी ओर झांकने तक को भी उद्यत नहीं होते। इसी कारण ईशोपनिषद्में इन्हें अज्ञानियोंसे भी गहरे अन्धकार में फंसनेवाला कहा है। हां जिस का भाग्योदय हो वह स्वामी रामतीर्थ समान Mathematics (गणित शास्त्र) का Professor (उपाध्याय) होता होता ही भक्तराज सिद्ध बन जीवन सफल कर जाता है। अस्तु।

सिद्धराज कपिल मुनि का गुरुमन्त्र ही सर्वोत्तम सर्वोपकारी औषध होनेसे हम अन्तमें व्याख्यान करके इस परमात्मध्यान (नं० ६) विषय को समाप्त करना अपने लिये सौभाग्यवर्धक समझते हैं। तथा अपने पाठकों के लिये भी। महात्मा कहते हैं कि ध्यान वास्तवमें मनका निर्विषय होना मात्र है। मन का सभी विषयोंके विचारोंसे शून्य होना ध्यान है। यदि पाठकोंमेंसे एकने भी इसका यत्न किया तो उसे आगेका मार्ग स्वयं खुला

प्रतीत होगा। जिस समय मन खाली हो जाता है, एक भी विचार इसमें नहीं रहता, तो तुरन्त एक विचित्र शक्ति केंद्रित प्रतीत होने लगती है। एकबार इस शक्ति की प्रतीति हुई तो साधक का नवीन जीवन आरम्भ हो जाता है। इसे ही शक्ति का जाग्रत हो जाना कहा जाता है। इसी के लिये बद्धपद्मासन आदि हठयोग के साधन किये जाते हैं। एक बार यह जगी फिर जिधर चाहो इसे चलावो। आकाशपाताल लोक लोकान्तर सभीसे इच्छा मात्र से आपका सम्बन्ध जुड जाता है॥ इत्यलम्॥

सातवीं झांकी।

इस लेखमें लेखक अपने सुहृदों को प्राप्त हुए अनुभवोंको उद्धृत करनेका यत्न करेगा, क्योंकि वैज्ञानिक वार्ता एकत्र करते समय केवल उसकी सत्यता परही ध्यान रखना होता है। इस बातपर नहीं कि इसकी प्राप्ति कहांसे हुई। यदि अनुभव, स्वप्न, दिव्यदर्शन, सत्य हों चाहे साधुके चाहे साधक के चाहे व्यक्ति अपने, चाहे सम्बन्धियोंके चाहे योगीराजके चाहे भिखमंगे कंगालके; ये सभी एक समान ही ग्राह्य हैं। अतः सत्य समझता हुआ मैं यह अनुभव लेखबद्ध करना अपना वैज्ञानिक कर्तव्य आर्षधर्म समझता हूं और इस विचार से इन्हें यहां लिखता हूं कि सम्भव है मेरे न लिखनेपर संसार इनसे वञ्चित ही रह जावें। अस्तु!

कल मुझे यह विचार प्रबल हुआ कि देखो मैं किधरका किधर भटक गया। कहां 'परमात्मध्यान' और कहां 'वेद और क्रिमिः.' अथवा कहां 'वेद और सूद शब्द' इत्यादि लेख विषय! मैं तो फिर वेदके चक्कर में ही उलझ गया हालांकि लगभग वर्ष, १॥ वर्ष पूर्व जब मेरे पूज्य बड़े भ्राताजीने मुझे यह कहा था कि तुम फिर वेदमें ही रीसर्च करने लग जाओ तो मैंने यह कहकर साफ टाल दिया था कि अब मैं उस (Stage) से कभीका निकल चुका हूं और जो वेदसे प्राप्तव्य था वह मैं कभी का प्राप्त कर चुका हूं। साथही मुझे कल ही यह विचार आया कि अब शुभ स्वप्न भी कई दिनसे नहीं आया। अस्तु इस हार्दिक व्यथाके परिणामस्वरूप यह लेखनी आज फिर चली है देखें क्या लिख डालेगी।

(१) एक दिन प्रातः ही उठकर यही भाईसाहेब बोले कि मुझे आज स्वप्न आया है कि काकेका नतीजा निकल आया है पर उसका नाम तो पासोंमें नहीं है। समाचार पत्र आया तो वास्तवमें नतीजा निकला हुआ था और उस लडके का नाम पासोंमें नहीं था। अर्थात् वह एफ्. ए. फेल हो गया।

इन भाईसाहिबको सदैव निद्रा बडी स्वच्छ आती है। स्वप्न सर्वथा नहीं आते। जब चाहें सो अथवा जाग जाते हैं। परमात्मा की कृपा है। साफ है कि स्वप्नमें आगेका वृतांत कुछ समय पूर्व ही दृष्टिगोचर हो गया। इसीसे मानना पडता है कि आत्माके लिए देशकालका व्यवधान नहीं। आगामी घटनायें प्रत्यक्ष वर्तमान समान समाधिमें दीख जाती हैं। इसी प्रकार दूरदेशस्थ घटनाएं भी अपने सामने ही रही प्रतीत पडती हैं। वास्तवमें आत्मतत्त्व स्वयं देशकालाऽनवच्छिन्न है। इसलिए बिना आये गए तत्स्थ ही सब देख लेता है। हां मन प्राणसूत्रसे बन्धा धागेसे बन्धी भिडके समान भूत, भविष्य, दूर समीपस्थ सभी घटनास्थलोंपर पहुंच निरीक्षण कर आता है।

(२) एक लडके की सगाई हुई। बडा आनन्द सभीको होना स्वाभाविक था। मुझे भी हुआ। परन्तु वैज्ञानिक दृष्टिसे यह घटना तीन बातोंसे सम्बन्धित थी। यह नहीं कि उनका प्रभाव इसके होनेपर पडा है पर वे इससे सम्बन्धित अवश्य हैं क्या सम्बन्ध है यह लेखकको नहीं पता पाठक स्वयं स्यात् ढूंढ निकालें।

(क) इस लडके की माता को जब भीड पडती है तो यह बहुत परमात्मा को दिलसे लगाकर पुकारती है ऊंचे ऊंचे भी। यह नहीं सोचती कि दर्शक मुझे हंसते हैं कि यह क्या करती है। वह हंसते इसलिए हैं कि काम निकाला फिर यह परमात्माको नाममात्र

ही स्मरण करेगी अब गरज है तो सारा दिन राम राम रटती है इत्यादि । अस्तु आजकल भी इस बात से घबराई हुई कि सगाई क्यों कहीं पक्की नहीं होती खूब गीता प्रतिदिन घोटने लगी अब सगाई हो गई है देखें कितने दिन तक गीता पाठ और चलता है । यही इन्होंने इस लडके के विलायत जानेपर किया था । यही कई बार अपने पतिदेव के बीमार होनेपर किया था । बहुधा परमात्म देव इनका करुण क्रन्दन सुन ही लेते हैं और इन की इच्छा पूरी कर देते हैं पर फल मिलनेमें देर होने पर ये घबराती बहुत हैं अब भी दो चार दिन हुए कह रहीं थीं कि मैं तो अपनी गरज के लिए करती हूं ।

यह गीतामें लिखे आर्त तथा अर्थार्थी भगवान् के भक्तोंमें से हैं जो जरूरत पडनेपर भगवान्का आवाहन करते हैं जरूरत पूरी होनेपर फिर केवल फरज पूरी ही मुश्किलसे करते हैं ।

(ख) इस लडके के दादाजी, लगभग ३०-३५ वर्ष बल्कि इससे भी अधिक कालसे घडी की सूइयोंकी तरह एक तार दोनों समय संध्या अवश्य करते हैं उनको स्यात् पता हो कि कभी नागा पाया हो । हम सबकी समझ में तो कभी स्मरण नहीं हो आता कि ऐसा हुआ हो । इनके आचरण को देखनेसे दादीजी भी मृत्यु के दशपंद्रह वर्ष पूर्वसे संध्या यथाशक्ति बराबर करने लग गयी थीं । इनके पूज्य पिताजी भी पहिले जैनियोंका मन्त्र फिर राम राम फिर ओ३म् ओ३म् जाप आयुभर विशेषकर पिछले बीसियों वर्षोंमें तो अत्यधिक ही करते रहे थे । लोभ, क्रोध, अहङ्कार आदि से हमें अचम्भा है कि कैसे कोई व्यक्ति इस प्रकार रहित हो सकता है । जब किसी को गाली देते तो कहते ' ओह तेरा भला हो जाय ' इसको ही गाली चाहे समझ लो । यदि घरमें उनकी

पुत्रवधुएं कभी कुछ कहतीं सुनतीं और सास उनकी शिकायत करती, तो वे कहते कि 'मां दियां लाडलियां आन कुछ बनाके पन्हां नूं खला पला ' अर्थात् यह अपनी अपनी माताकी प्यारी पुत्रियां हैं तू भी इनको कुछ पिन्नी (मोदक) आदि बनाकर खिला फिर यह क्यों तुमसे लड़ें इस प्रकार सदा शांत रहना उनका स्वभाव था । यदि उन के पौत्र कहते कि बाबाजी फुलके बहुत थोडे खायें हैं तो कहते ' ओह चल मुंडिया कोई रजना है ' अर्थात् . ' पुत्र ! क्या कोई पेट पूरा थोडा भरना है ' इस प्रकार हंसीमें टाल देते । कभी किंचित् भी अधिक नहीं खाते थे । आयु भी परमात्माकी कृपासे ९२ वर्षके लगभग सुखसे भोगी । उनको स्वप्न अच्छे बुरे आगामी घटनाओंके सूचक आजाया करते थे और घरवाले उनके मुखसे सुनकर निश्चन्त हो जाया करते थे इन के छोटे पुत्र के चमत्कार तो मैस्मेरिजमयोग आदिके बडे प्रसिद्ध हैं । उनको तो जुदा लेखमें लिखा जा सकता है । अस्तु ।

उक्त दादाजीने कुछ दिन हुए कि एक स्वप्न बतलाया कि कृष्ण सरीखे एक महापुरुषने १२-१४ पुरुषोंके विरुद्ध युद्ध करके किसीको पछाड बाकी को भगा, एक देवीस्वरूप कन्याका हाथ काकेके हाथमें पकडा दिया और कहा इसके विवाहके सम्बन्धमें जो अडचनें डालते थे उनको परे हटा दिया है । बस स्वप्न से तुरन्त जागरित दशामें वे आगये । मेरी स्त्रीसे उन्होंने बताया उसने मुझे कुछ कुछ बताया । मैं ने उनसे कहा ' उसकी माताको भी आपने बताया ?' उन्होंने उसे भी बताया ' मैंने कहा यही दिव्य-दर्शन कहे जाते हैं समाधिमें यही दृश्य देखने होते हैं अब इस लडकेकी सगाई हुई ही जानो ।

इससे पूर्व वे मुझे चिंगारियां, कभी चमक आदि दिखाई देती

बतला चुके थे। वास्तवमें बात भी सच्ची है कि जो प्रतिदिन 'दोषावस्तर्धिया वयं नमो भरन्त एमसि' मन्त्रमें कहे अनुकूल रात्रि दिनमें नमस्कार करते हुए परमात्माके समीप रहें। बेशुमार बार ओ३म् ओ३म् जपें। रात्रिमें जागते यह शुभ कार्य सम्पादन करें। गीता उपनिषदें प्रति दिन रगडते रहें तो फिर ऐसा कब हो सकता है कि परमात्माको सुनाई न पडे। अवश्य ऐसे महात्माकी जो इच्छा होगी तद्विषयक दिव्यदर्शन उसको अवश्य प्राप्त हो सकता है।

अस्तु। लगभग एक महिनेके भीतर ही यह सगाई हो गई॥

(ग) लेखक कई बार इस लडके के तायाजी, पिताजी आदि को कहता रहा कि एक बार इश्तिहार ट्रिब्यूनमें दे दो कि लडके की सगाई करनी है तो अच्छेसे अच्छा सम्बन्ध आप को मिल सकता है, परन्तु सर्वथा तायाजी नहीं माने। पिता तो कभी कभी मान जाते थे। अनेक बार मुझे यह कहने पर झाड भी खानी पडी कि हमारी हतक है तुम्हारी गलती है। परन्तु मैं कहता था कि मैं नहीं समझता कि इसमें हतक कैसे हो सकती है? सारा जहान इश्तिहार दे देता है, बडे बडे देते हैं, इसमें बुरा ही क्या है। अनुकूल सम्बन्ध मिलही तब सकता है इत्यादि। अस्तु। पहिले किसी प्रकार कोई न माने। एक दिन तायाजी कहीं बाहर गये हुए थे। चुपके से मैंने और उस के पिताजीने विज्ञापन दे ही दिया। लगभग दस १२ दिनके अन्दर अन्दरही जैसी लडकी लडका चाहता था वैसी लडकीसे सगाई बडी धूमधामसे आनन्दपूर्वक हो गई। सभी को हर्ष हुआ। मुझे इस लिये भी कि मेरी वर्षोंसे निकली हुई वाणी पूरी हुई। यह सम्बन्ध इश्तिहार के द्वारा प्राप्त

नहीं हुआ। पर इश्तिहारवाली बात पूरी हुई तब जाकर सच्ची पक्की वास्तविक सगाई हुई।

(३) लेखक को स्वप्न आया कि वह अपने भाई के घर पूछने गया कि उनके लडके का क्या हाल है? तो उस की भौजईने बतलाया कि रात सोया रहा है। प्रातः उठकर जब वास्तवमें वह उससे पूछने गया तो यही उत्तर मिला कि, हां ग्यारह बजे सो गया था फिर प्रातःकाल तक सोया ही रहा है।

(४) लेखककी धर्मपत्नी को स्वप्नमें दो व्यक्ति दृष्टिगोचर हुए। एक ने कहा ' रगड के दियो रगड के ' अर्थात् ' रगडकर दो रगडकर ' यह विस्मित सी हुई कि कौन यह क्या कह रहा है? तो दूसरे साथी ने कहा, ' ऐह बाबूजी अन ' अर्थात् यह बाबूजी हैं। इन दोनों सूत्रोंका अर्थ समझाने के लिए यह लिखना आवश्यक है कि मेरी छोटी सी लडकी लगभग एक वर्ष से मुखपर सोजा रहने, कभी कम कभी अधिक होने से, बीमार रहती थी। बहुत चिकित्सा कराई पर बीमारी जड से नहीं गई थी। अन्त में फिर मैं स्वयं ही हड कालानून निशादर घिसकर उसको पिलाने लग गया।

एक दिन उस की लगातार बीमारी से उदास हुई हुई मेरी स्त्री दोपहरमें उस को लेकर लेट गई तो यह स्वप्न आया। बस उस दिन से फिर अति शीघ्र वह वर्षभरका रोग मानों सदाके लिए उड गया। यह बाबूजी लेखक के सिद्ध चचा हैं जो स्वर्गवास किये ३५, ३६ वर्ष बीत चुके हैं। तकलीफ में युक्तिपूर्वक स्मरण किये जानेपर दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं। मेरी माताजी तो जब भी धूनि देती थीं तो तुरन्त कृपा करते थे। एक बार मेरी बडी बहिन मरणासन्न हुई तो इन्हींने स्वप्न में उन्हें दर्शन देकर कहा कि किधर जा रही

हो अपने भाईयों के बीच में जाकर खाट डालकर पडे रहो। बस उसी दिन से वह अच्छी होने लग गयीं। इस बात को बीसियों वर्ष बीत चुके। भगवान् की कृपासे हमारी बहिन जी अब तक आनन्द प्रसन्न हैं।

एक बार लेखक जब अभी बच्चा ही था तो, बारीक ऊन संवारने के कन्धे पर, रात को पडा पडा सिर के बल गिरपडा और कन्धा सिरमें लग जानेसे घावसे रक्त निकल पडा। माताजी घबरा कर साथ लेकर सो गई तो स्वप्न में बाबूजीने कहा 'भाबो! क्यों घबराई हैं' अर्थात् 'भाबीजी! आप घबराई हुई क्यों हैं?' तो माताजीने उत्तर दिया कि देख तो भाई इस के कितनी चोट आई है? तो आप बोले नहीं कुछ नही यह बिल्कुल ठीक है घबराओ मत। प्रातः मैं सोकर उठा तो खेलने लग गया कहते हैं कि सिरमें कुछ गडबड नहीं थी माताजी निश्चिन्त हो गई। मेरी चचांजीकी प्रार्थना भी सुन लेते हैं। एकबार मेरी भौजाई, उनकी पुत्रवधूके बीमार होनेपर भी उसे दर्शन दे गये और उसे आराम आना आरम्भ हो गया। इत्यादि उनकी महिमा कहां तक वर्णन की जाय लेखक तो उनके पासङ्ग भी नहीं; हां उन का प्रियवत्स अवश्य है यह बडे भाईसाहिब बतलाते हैं कि लेखक से उनको बहुत प्रेम था, लेखक उस समय मोटा होता था तो बडी बहिनजी को उसे उठाने न देते थे कि कहीं गिरा न देवे इत्यादि।

(५) एक बार लेखक की स्त्री चेचक से सख्त बीमार हुई तो आठवीं रात्रि जब व्याधि जोर पर थी तो उसे स्वप्न में अपने मृत दादा, दादी दिखाई पडे इसने कहा बाबा! मैं भी थ्वाडे (तुम्हारे) कोल (पास) आऊंदी (आ रही) ऐं (हैं) उस ने उत्तर दिया 'नां पुत नां तेरा नी ऐत्थे आउनदा कम्म नां, तूं

मुड जा ' अर्थात् ' नहीं बेटा नहीं तुम्हारा यहां आनेका काम नहीं लौट जा ' यह कह कर उसे वापिस कर दिया। उस दिन से उसे आराम आना आरम्भ हो गया।

(६) एक वार लेखक की स्त्रीको एक फोडा ऐसा भयङ्कर निकला कि दशा शोचनीय हो गयी। मैं और बडे भाईसाहिब ने उसकी खाट के साथ दूसरी खाट लगाकर उसे दूसरी बिछी खाट पर उठाकर डाला तो वह पसीना हो गई भाईसाहिब चिंतित हो गये। तुरन्त लेडी डाक्टर को बुलाकर आपरेशन करवाया गया। इन्हीं में किसी रात मेरी स्त्रीको स्वप्नमें मेरी पूज्य माताजी बडे शानदार कौचों आदि से सुसज्जित कमरे में शान से बैठी हुई दृष्टिगोचर हुई और पूछने लगीं कि तुम इस प्रकार क्यों लेटी पडी हो? तो इसने उत्तर दिया कि माताजी मैं तो इतनी बीमार हूं। उन्होंने कहा कोई न, आराम आ जायगा, दवाई कर लो। बस इतनी शोचनीय दशा से भी शीघ्र ही स्वस्थ हो गयी। जान बच गयी।

(७) एक बार उसे ही स्वप्न आया कि दीवार परसे एक सुन्दर मूर्ति एक बालक की, मेरी भौजाई ने उसे पकडाई है और कहा है कि ' लै कुडे तै नूं कृष्णदिनी ऐ एहनूं स्वारके रक्खीं एह गल्लांभी करने लग जांदा ऐ ' ' अर्थात्, ' ले बेटी तुझे कृष्ण देती हूं इसे संभालकर रखना यह बातें भी करने लग जाया करता है। ' उसने वह मूर्ति ले ली और लाकर बिछे पलङ्पर उसे बिठला दिया। उस मूर्ति का चेहरा अत्यन्त जाज्वल्यमाना था बडा सुन्दर सुसज्जित। वह मानों उपदेश साभी करने लग गया। और घरके सभी उस के पास आ गए। बडे भाईसाहिब ने भी आदर और विस्मयसे कहा ' तभी तो इन्हें कहते हैं कि यह कृष्ण हैं ' मैं ने

उनका वाक्यार्थ औरोंको समझाया इत्यादि। यह सम्पूर्ण स्वप्न-लीला देखकर मेरी स्त्री अत्यन्त प्रसन्न हो गई। कि स्वप्नमें श्रीकृष्ण जी के दर्शन हो गये।

इत्यादि घटनायें वर्णन करने का लेखकका उद्देश यह है कि परिस्थिति यदि ऐसी बना दी जावे तो स्वप्न शुभ, दिव्य आने आरम्भ हो जाते हैं। दुःखी व्यक्ति के स्मरण करने पर परलोकस्थ आत्मायें सहायता कर देती हैं। परमात्मा देव भी दुःखीका आर्तनाद सुनकर द्रवित हो जाते हैं और उसका दुःख दूरकर देते हैं इत्यादि। दिनरात परमात्मा की ओर आकृष्ट रहनेसे भी शुभ स्वप्न आने लग जाते हैं। दिव्यदर्शन लेनेवाले व्यक्तिके सङ्ग रहने, उससे तद्विषयक वार्त्तालाप करने, उसके तद्विषयक लेख पढने से भी, शुभ स्वप्न, उसकी न्यांयी, आने लग जात हैं। पितरों के, कृष्णादिकोंके, दर्शन होने लग जाते हैं इत्यादि।

अब यहां पर कुछ ओ३म्कार-महिमा भी वर्णन करनी आवश्यक समझता हूं। क्योंकि ओ३म्कार कुञ्जी है हृदयमंदिर का ताला खोलने की। खुलजानेपर आनन्दाऽनुभव होने लग जाता है। वास्तविक ओ३म् जाप की रीति, ओ३म्में मग्न हो कर, ओ३म् को भूल जाना है ओ३म् एक आधबार कह फिर चुप शांत आनन्दित हो उसी दशामें स्थिर रहना है। बद्धपद्मासन तथा दण्डासन-द्वारा, सुषुम्ना द्वार-खुलकर तब ओ३म् जपना आता है फिर आनंद ही आनंद होता है। एतद्विषयक दो काव्य (१) योगकाव्य (आनन्दाऽनुभव आगे लिखकर यह परमात्मध्यान नं० (७) यहीं समाप्त करते हैः—

योगकाव्य।

नमः पतञ्जलि मुनिको, नमो भोजमहाराज।
देह, वाणी, मन, सुखहित, रचे ग्रन्थ ऋषिराज ॥ १ ॥
महऋषि वेदव्यासने, रचा भाष्य गुणखान।
ऋषि, सिद्धि, मुक्ति, का, एक मात्र जो ज्ञान ॥ २ ॥
रचा महाभारत तथा, रचा शास्त्रवेदांत।
उस ब्रह्मर्षि सिद्ध को, नमः जो है शुभशांत ॥ ३ ॥
भिक्षु जो विज्ञान का, पण्डितवर शुभ प्रज्ञ।
टीका रची अपूर्व जिस, योग विषय सर्वज्ञ ॥ ४ ॥
टीका की वाचस्पति, मिश्र ने भी शुभसार।
उन भिक्षु तथा मिश्रको, करूं न क्यों नमस्कार ॥ ५ ॥
दिल न दुखाना किसीका, सर्व प्रथम यह योग।
सच्चा मीठा बोलना, हितकर दूजा योग ॥ ६ ॥
चोरी न करना कभी, सर्व रत्न की खान।
सिद्ध जो होवे तभी तो, सभी धरो यह ध्यान ॥ ७ ॥
ब्रह्मचर्य सब से बडा, है ईश्वर प्रणिधान।
ईश, ब्रह्म आश्रित विचार, रहना तद्गत प्राण ॥ ८ ॥
अपरिग्रह सन्तोष है, चित्त फंसे कहीं न।
विषय अशुभ में सर्वथा, लोभ काम भी न ॥ ९ ॥
उत्तम तप स्वाध्याय है, करना स्वात्मध्यान।
सुखस्वरूप आनन्दमय, के अर्पण मन प्राण ॥ १० ॥

उत्तम आसन पद्म है, बद्ध कहाता जो।
पाओंमें सिर धर तथा, पवन भरी जब हो ॥ ११ ॥

दूजा आसन दण्ड कह, दूहरा करे शरीर।
भीतर के पट खोलता, साधक हो यदि धीर ॥ १२ ॥

सर्व सुखद आसन यही, खुले सुषुम्ना द्वार।
दण्डी स्वामी की कृपा, होवे जो सुखसार ॥ १३ ॥

महिमा प्राणायाम की, वर्णन की कब जाय।
पहिला करे शरीरवश, दूजा चित्त ठहराय ॥ १४ ॥

तीजा करे तुरन्त स्थिर, मन-बुद्धि, चित्त, प्राण।
चौथा बिषय छुडाय सब, कर दे ब्रह्म समान ॥ १५ ॥

पहिला प्राणायाम तो, है उत्तम व्यायाम।
शुद्धि करे शरीर की, प्राण आत्मा बलवान ॥ १६ ॥

चौथे प्राणायाम को, शुभसमाधि जान।
दूजे को लख धारणा, अरुतीजे को ध्यान ॥ १७ ॥

परमात्मा के नाम में, लगा हमारा ध्यान।
कौन छुडा सकता हमें, यत्न करे सुमहान् ॥ १८ ॥

वह तो हमें आता नहीं, सीखें किस से जा।
आत्मज्ञान शुभ शांतिमय, नहीं सके अभी पा ॥ १९ ॥

रुलया कश्यप राममें, रमया मनश्विपूर्व।
ओ३म् मन्त्र महा ध्यावते, पाते ब्रह्म अपूर्व ॥ २० ॥

धन्यवाद जगदीशको, जिस शुभ नाम ओ३म्कार।
जम्मूवासी गुरू को, नमः अनेकों बार ॥ २१ ॥

आनन्दाऽनुभव।

मोहन आनन्द दे रहा, आतमराम प्रवीण।
कौन गिरा वर्णन करे? जो मोहन आधीन ॥ १ ॥
अन्दर आनन्द भर रहा, पूर रहा हिय सिंधु।
कारण आनन्दमय स्वयं, परम सखा सुबन्धु ॥ २ ॥
उठ तरङ्ग पयनिधिमें, पूर रही दिव्य धाम।
सर्वस्व अन्त: स्थित वही, मोहन प्रिय अभिराम ॥ ३ ॥
मस्त रहा हो देह स्थित, भर रहा जब आनन्द।
परमानन्द चिदस्थ हो, व्याप रहा सुखकन्द ॥ ४ ॥
जय जय आनन्दरूपजी, जय सुख सम्पद्मूल।
जय हृदयेश गुहाशय, जय परमानन्द मूल ॥ ५ ॥
नमो दिव्य अभिराम शुभ, नमो मनोहर वाम।
नम: धीर गम्भीर मधु, नम: भद्र सुखधाम ॥ ६ ॥
अन्दर आनन्द दे रहे, रम रहे दृष्टि मांह।
भृकुटि, मस्तक, पलक, में पड रही उनकी छांह ॥ ७ ॥
आनन्दरूप उन देवको, कैसे धारे हृदय।
उछल, उछल कर खिल रहा, छलक, छलक कर हृदय ॥ ८ ॥
हंसी संभाली जाय न, मुख खोले सब भेद।
अन्दर हृदयानन्द जो, पूर रहा शुभ खेत ॥ ९ ॥
खेत रहा भर नीरसे, उछल रहा भरपूर।
हंसमुख सभी दिखा रहा, आनन्दरूप अपूर्व ॥ १० ॥

आठवी झांकी।

परमात्मध्यान संख्या ७ में लिखा गया था, कि 'पूज्य चचाजीके चमत्कार को तो जुदा लेखमें लिखा जा सकता है," तदनुसार पाठकोंकी रुचि ब्रह्मविद्यामें बढानेके लिये इस लेखमें उन्हींका वर्णन करनेका यत्न करता हूं। अपने पूज्य पिताजीसे बहुत अनुरोध करके इनका वृतान्त लिखवाया है ताकि ठीक ठीकही लिक्खा जाय। पांच घटनाएं जो मैंने आगे कई बार उनसे सुन रक्खी थीं उनका उन्होंने जो विवरण दिया है, उसके आधारपर मैं उनका वृत्त अपनी भाषा में लिखता हूं। यथा—

उन दिनों बाबू मुनशी रामजी लाहौर कालिजमें पढा करते थे वहांसे शहना (जिला लुधियाना)में गये वहां मेरे पिताजीसे कहा कि मैं मैस्मेरिज्म सीख कर आया हूं। फिर पिताजीकी उपस्थिति में ही दिनके समय एक दिन निम्नलिखत परीक्षण (तजरुबा) किया—

एक लडकेकी आयु तो लगभग १२ वर्षकी थी, परन्तु वह अभी क, ख आदि भी कठिनतासे ही पढ सकता था, उसको बिठाकर पूज्य पिताजीके सामने ही उसपर प्रयोग (अमल) किया। उसके बैठनेके पीछे गद्दा बना कर रख दिया और उसे कहा कि हमारे किसी एक अङ्ग को देखता रह और दिलमें ख्याल रख कि सोने लगा हू। पांच मिनटमें लडकेने कहा कि नींद आती है, उसको आज्ञा दी गयी कि दस मिनट सो जा। बारह मिनट पीछे उसने करवट बदली। पूछा

गया कि ' सो चुका ' उत्तर मिला कि अब तो १२ मिनट हो गये हालांकि वह घडी देखना बिल्कुल न जानता था। फिर उसको कहा गया कि तुम सैरकर आओ बंबई देख आओ। उसने कई बातें बंबईकी बतलाईं। फिर उसको कहा गया कि तू संस्कृत जानता है ? उस ने कई श्लोक संस्कृत के सुनाए और अपने पेटको सुकेडने लगा। पूछा क्यों ? उसने उत्तर दिया कि पतञ्जलिजी ऋषि खडे हैं, वह आपका दर्शन करने आये हैं, उनके मार्ग में पेट की रुकावट है। उसको कहा गया कि उनकी सेवामें मेरे नमस्कार कहो। इस के पीछे कई और बातें पूछ कर जिनका उत्तर उसने साफ साफ दिया उस को कहा गया कि यह सब भूल जाओ।

(२) उनकी सगी बहिनके जोडोंमें दर्द रहा करता था। एक दिन लगभग रातके नौ बजे मकानकी दूसरी छतपर उन्होंने अपनी बहिनको बिठा लिया नीचे अच्छा बिस्तरा बिछाया और पिछली ओर गद्दा बनाकर रख दिया ताकि यदि नींद आनेसे गिरे तो चोट आदि न आवे। उसको भी पहिले उसी प्रकार कहा गया कि एक ओर देखती रहो और सोनेका ध्यान रखो थोडी देर में वह सो गई जब करवट बदली तो एक दो साधारण प्रश्न पूछकर कहा कि तुम हरिद्वार गङ्गाजी में स्नान कर आओ क्योंकि उसका विचार था कि मैंने हरिद्वार जाना है। उसने कहा रास्ता किधर है। उसको बतलाया गया कि यहां से बरनाला जाओ वहांसे रेलके रास्ते चली जाओ।

उसने बरनाला जाकर कहा कि यहां तो बहुत बडे बडे सांप पडे हैं। उसको कहा गया कि यह सांप नहीं यह रेल की पटरी है इसी पर हो कर चली जाओ यह हरिद्वार तक जायगी। उसने जल्दीसे कह

दिया कि मैं हरिद्वार पहुंच गयी यहां तो सब बाजार खाली पडे हैं। (उन दिनोंमें बाढ आनेका भय था जो पीछेसे आ भी गया इसलिये रातको बाजार खाली रहते थे।) उससे कहा गया कि स्नान कर लो। तो उत्तर मिला कि हाय इसमें तो हड्डियां ही हड्डियां पडी हैं, मैं यहां स्नान नहीं करूंगी। इस के पीछे और दो चार प्रश्न किये गये। उत्तर साफ साफ मिला।

फिर उसको कहा गया कि तू तो हकीम है अपने शरीरमें फिर कर देख कि इस में कोई (नुक्स) दोष तो नहीं है। उत्तर मिला कि जोडोंमें बहुतसी जिलब (चिकना द्रव्य) जमी हुई है। पूछा गया यह कैसे निकले। उत्तर दिया कि या पसीने के रास्ते या जुलाबके द्वारा। पूछा कौनसा ठीक रहेगा। उत्तर मिला पसीने द्वारा ही ठीक है क्योंकि जुलाबोंद्वारा दुर्बलता बहुत हो जायगी। कहा गया अच्छापसीनेद्वारा ही निकाल दो। उसने कहा मेरे पास गरमी नहीं है। कहा गया लो गरमी हम देते हैं और यह कहते हुए उसके नाक के पास हाथ चत्ता अङ्गुलीओंके सिरे उसकी नाककी ओर करके एक फूंक लगा दी। उत्तर मिला कि गरमी थोडी है। एक बार फिर वैसे ही दुहरा दिया यह कहते हुए कि और गरमी लो। और पूछा गरमी अब तो काफी है? उत्तर मिला काफी, अधिक गरमी भी हानि किया करती है। इसके पीछे उन्हें कहा गया सो जाओ और भूल जाओ। उसी समयसे उसको पसीना आना आरम्भ हो गया बडा दुर्गंधित था। दो दिन तक पसीना आता रहा, तीसरे दिन स्नान आदि किया। फिर वह दर्द कभी नहीं हुआ यद्यपि भूआजी तत्पश्चत २५, २८ वर्षतक जीती रहीं थीं।

(३) यह घटना सव १८९४ की है। एक लडका १८ वर्षकी

आयु नाम तिलकराम तिल्लीसे बहुत दुःखी था। कठिनतासे ही एक आध फुलका (रोटी) खा सकता था। उठने बैठने में भी अतीव कष्ट अनुभव करता था। उसके पेटमें बाईं ओर बहुत बडी तिल्ली थी अर्थात् आधा पेट रुका हुआ था क्योंकि वह बहुत आलस्य-युक्त तथा सुस्त था, इसलिये उसको लोग डिपटी कहा करते थे।

उन्हीं दिनोंमें बाबू मुन्शीराम शहनामें आ गए थे। उस लडके को कहा गया कि तू बाबूजीके पास उपस्थित रहकर जो कुछ काम उनका हो किया कर। लगभग डेढ मास पर्य्यन्त वह उनके पास साधारणतया उपस्थित ही रहा, परन्तु अपने दुःखका वर्णन उसने बाबूजीसे नहीं किया, नहीं उनको ऐसा विचार आया। यहां तक कि उनके लाहौरको जानेका समय आ गया कि कल प्रातः काल लाहौर-को जायंगे। पिताजीने कहा कि भाई ! (तिलक-राम) डिपटीका तो परिश्रम व्यर्थ ही गया क्योंकि वह अब भी दुःखी ही रहा। उन्होंने कहा कि उसने मेरेसे तो कभी वर्णन नहीं किया। अस्तु, आज शामको उसको बुलालो।

तात्पर्य यह कि सायंकाल छतपर बिस्तरा बिछाकर उसको उन्होंने अपने सामने बिठा लिया और पीछे उसके एक रजाईका गद्दा बनाकर रख दिया। उसको कहा कि मेरे किसी अङ्गको देखता रह और दिलमें विचार रख कि सोने लगा हूं। उसने दस मिनट पीछे कहा कि नींद आती है। तब उसको कहा गया, अच्छा, पन्द्रह मिनट सो जाओ।

वह पन्द्रह मिनट पीछे करवट बदल कर जाग उठा। उससे कई प्रश्न किये गए जिनके उत्तर देता रहा। फिर उसको कहा गया कि तुम अपने शरीरमें फिर कर देखो तो कोई दोष इसमें

है ? उसने उत्तर दिया कि पेटमें बडासा पत्थर जमा हुआ है जिसने सारा पेट रोक रक्खा है।

उसको कहा गया कि तुम तो हकीम हो इसको निकाल दो (इसका उसने जो उत्तर दिया वह अब पिताजीके स्मरण नहीं रहा)। थोडा समय और बातें करके उसको कहा गया कि अब सब बातें भूल जाओ। पीछेसे उसको उठा कर कहा कि अपने घरको चले जाओ।

प्रातःकाल बाबूजीको पिताजी और तिलकराम का मामा तपे स्टेशनपर पहुंचाने चले गये जो वहांसे दस मील था जब वे उन्हें गाडी चढा कर वापिस घर पहुंचे, तो लगभग ११ बजे होंगे तब तिलकरामने कहा कि मेरा पेट आज बहुत नरम प्रतीत होता है। तात्पर्य यह कि कुछ ही दिनोंमें पेट साफ हो गया। न कोई जुलाब आया न कुछ अन्य प्रकारका ही कोई और कष्ट हुआ। उस समय सर्वथा नीरोग हो गया, फिर पटियाला रियासत के उग्गो ग्राममें पटवारी हो गया। फिर कभी तिल्लीकी शिकायत नहीं हुई।

(४) लाहौरसे पढाई समाप्त करके, ग्राम कोटगङ्गूराएमें आकर अपने घर रहने लगे। एक दिन अजीर्णनाशक गोलियां बनानेके लिये कुछ दवाईयां रगड रहे थे, कि एक युवक जिमींदार बालक जो उनके पास कभी कभी बैठा करता था, आया और कहने लगा, कि 'बाबू! तू बडा हकीम बना बैठा है और मेरी आंखें सूज रही हैं। रातको नींद नहीं आती दुःखती हैं, कोई दवाई दे।' उसको वही कूंडी जिस में अजीर्णनाशक चूर्ण रगडा गया था, दे दी और कहा कि इसमें थोडा पानी डाल कर इसको घोल आंखोंपर इसका लेप कर लो। उसने

वैसा ही किया जिससे उसका आंखोंका दर्द जाता रहा।

(५) एक दिन एक स्त्री उनकी माताजीके पास आकर कहने लगी, कि तुम्हारा बेटा इलाज करता है। मैं कई बरससे दमेकी व्याधिसे दुःख उठा रही हूं कोई दवाई ले दो। माताने उनको कहा, कि इसको कोई दवाई दे दो। उन्होंने कहा, कि अच्छा! इसको कोटगङ्गूराए भेज देना। दूसरे तीसरे दिन वह कोटगङ्गूराएमें गई, तो उसको कुछ गोलियां देकर कहा कि, यह खा लेना। उसने पूछा, 'भाई किसतरह खाऊं?' उत्तर मिला, 'माताजीकी सिफारश है खाना न खाना, बीमारी हट जायगी।' वह चली गयी और बिमारीसे निरोग हो गई।

(६) पूज्य पिताजी फील्डकानूनगो थे। एक पटवारीकी अनुपस्थितिकी रिपोर्ट उनको एक बार करनी पड़ी। क्योंकि वह इनके हलकेके एक ग्रामका पटवारी था और वहां हाजिर नहीं था। इसपर उसने इनके विरुद्ध अफसर माल (एक्स्ट्रा ऐसिस्टैंट कमिश्नर) के पास कोई झूठी शिकायत लगा दी। जिसको सच समझकर उसने इन्हें पत्रद्वारा आज्ञा देकर बुला भेजा। जिसके विशेष लेखप्रकारसे पता चलता था, कि वह सख्त नाराज है। अतः उसको मिलने जाते हुए पहिले पिताजी कोटगङ्गूराए आए, जहां बाबूजी भी थे और रात वहां रह कर अगले दिन अफसर मालको मिलने गए। जाते समय बाबूजीने उन्हें कहा कि पहिलें अफसर मालको उसके डेरे (घर) पर मिलकर फिर उसके दफ्तरमें हाजिर होना। पिताजीने कहा कि, वह डेरे पर नहीं मिलेगा, क्योंकि सख्त नाराज है। उन्होंने कहा कि अवश्य ही उनके मकानपर होकर कचहरी जाना।

अतः पिताजीने प्रातःकाल ही उसके डेरेपर पहुंचकर चपडासी अरदलीको खबर दी । उसने कुरसी ला कर कहा, कि 'बैठो डिपटी-साहिब स्नान करते हैं,' मैं उनको सूचना देता हूं । अभी उन्होंने कपडे नहीं पहिने थे ।' तुरन्त पिताजीको ऊपर बुला लिया और ऐसी नम्रतासे बातें करने लगे, कि जैसे कि क्षमा मांग रहे हों । उन्होंने कहा कि उस पटवारीने कुछ ऐसे प्रकारसे बातें कहीं, कि हम सत्यमान बैठें । अब आप कचहरीमें उसका उत्तर लिखा देना । अस्तु ! कचहरीमें पिताजीका उत्तर लिखकर पटवारीको नौकरीसे पृथक् करनेकी आज्ञा जारी कर दी । वापिस आकर यह सब वृत्तांत पिताजीने बाबूजीको सुनाया, तो उन्होंने कहा कि अगर वह (अफसर माल) दिलमें तुम्हारे लिए कुछ बुरा भाव लाता तो जल जाता ।

इस प्रकार अपने स्वर्गीयसिद्ध चचाके ६ प्रसिद्ध, पिताजी तथा अन्य उपस्थित कुटुंबियोंके अपनी आंखों देखे, चमत्कार लिख कर यह परमात्मध्यान सं० (८) यहीं समाप्त करता हूं । यह सब सत्य घटनायें जैसे हुईं वैसे ही यथाशक्ति वर्णन कर दी गयी हैं ।

नवमी झांकी।

बहुत सज्जन भगवान् के नाम का जाप करते हैं। परमात्मा की कृपा से जाप बहुत प्रचलित हो रहा है। इस से आशा होती है, कि सिनेमा तथा नावलों के साहित्यसंसार में रहती हुई जनता में से भी भक्तजन प्रादुर्भूत हो ही सकेंगे। मैं स्वयं भी जैसा मुझ से बन पड़ता है कुछ न कुछ जाप करता ही हूं। पतञ्जलि व्यासने भी जाप की महिमा गाई है। पर वास्तव में जाप का फल क्या होता है, यह मुझे ६,७ महिना हुए ही पता चला है। मैंने एक रात ऐसा अनुभव किया कि मेरे कमरे का वायुमण्डल आनंद से भरपूर हो रहा है, उस आनन्दसागर में मेरा भौतिक शरीर उस आनन्द से कुछ ही स्थूल, जल में मीनसमान विद्यमान है, अन्यथा वह आनन्द-सागर उस स्थूल शरीर में ओतप्रोत है। इस प्रकार आनन्दमय का अनुभव जब मुझे प्राप्त था, तो उस में सत्य ज्ञानविचार फुरने-उठने लगे तब मैंने जाना कि यह आनन्दमय के एकात्म्यानुभव में विज्ञानमयका का हस्ताक्षेप हुआ है। कारण कि मेरा ध्यान उन सत्य ज्ञानतरङ्गों में चला गया, जब उन से तनिक हटा तो मैं जान पाया कि इतनी देर मैं आनन्दमय में नहीं था, विज्ञानमय में था और मुझे निश्चय हो गया कि विज्ञानमय आनन्दमय में विघ्नरूप उपस्थित होता है, परंतु विज्ञानमय से पृथक् हो ऊंचे उठते ही मनुष्य आनन्दमय में मस्त हो जाता है। यही दो आनन्दमय समाधि तथा ऋतम्भरा प्रज्ञा अवस्थायें कहलाती हैं।

अचानक मुझे पता लगा कि मेरे अन्दर हृदय में ओ३म् ओ३म् का जाप हो रहा है, तभी प्रतीत हुआ कि सत्यज्ञानकी तरङ्ग-माला भी नहीं उठ रही, आनन्दसागरमें भी डुबकियां नहीं लग रहीं, एकतार अन्दर ओ३म् ओ३म् का तांता बन्धा हुआ है। मैं पहिचान गया कि मन ओ३म् ओ३म् जप रहा है, अतः ऋतका धारण करने के लिए बुद्धि को अवकाश नहीं मिल रहा और आत्माको आनन्द लेनेकी छुट्टी नहीं। थोडी देर पीछे विचार आया, कि ओह! मैं किन विचारोंमें उलझ गया। ओ३म् ओ३म् कभी का हट गया न सच्चे ज्ञानविचार, न आनन्द। यह तो पुरानी ऊट-पटांग बातोंकी स्मृति मात्र, स्वप्न की न्यायीं मुझे उलझाए हुए है। तुरन्त समझ आगई कि यह तो मनोमय का खेल है, मनोराज्य है, इस में न जाप, न ऋतम्भरा, न आनन्द। इसके पीछे मेरा ध्यान सर्वथा बाहरी संसारमें चला आया और मैं चौकन्ना, जागता, संसारी पुरुष प्रतिदिन जैसा हो गया।

यह ९९ प्रतिशतक सत्य घटना है जिसने मुझे यथार्थ पहिचान अन्तर्जगत्की करवा दी स्यात् यह सब एक दूर बैठे महात्मा की प्रतिबिंबित शक्तिके कारण अनुभव हुआ। अथवा निराकार भगवान् की सीधी ही कृपा हुई, यह तो वह भगवान् अथवा महा-त्माही जान सकते हैं। मुझ अल्पबुद्धि की वहां तक पहुंच कहां? हां अनुभव अवश्य सर्वथा मुझे ही हुआ इसमें सन्देह की सर्वथा सम्भावना नहीं। अस्तु।

इससे जो उपयोगी परिणाम निकल सकते हैं, वह भक्त सुविज्ञ पाठक स्वयं भी निकाल सकेंगे, परन्तु मैं एक छोटीसी बात सुझा देना अनुचित न समझकर यहां लिखता हूं। वह यह कि वास्तवमें

जापका फल यह होता है कि स्थूल जगत्के विचार तो बन्द हो ही जाते हैं, साथ में मनोमय कल्पनाएं भी इतिश्री को प्राप्त हो जाती हैं। अर्थात् जबतक हृदय जाप करता रहता है, तब तक स्थूल, सूक्ष्म जगत्के विचार उसे तङ्ग नह कर सकते। ठीक जैसे निचल्ले बन्दर को वशमें करनेके लिए एक खूंटेसे उसे बांध दिया जाता है और वह उसीके चारों ओर घूमता रहता है। ठीक उसी प्रकार मनोमय के केन्द्र मनरूपी बन्दर बांधनेके लिये प्रणव जापरूपी सर्वोत्तम खूंटा गाड देना श्रेयस्कर है।

जब इस प्रकार मन बन्ध गया, विकल्प बन्द हो गये, तब संसाररूपी अट्टालिका का बडा फाटक बन्द हो गया; फिर आत्मा निश्चिंत रूपसे अन्दर बैठा शारीरिक अधिव्याधि तथा तच्चिन्ताओंसे सर्वथा मुक्त, सांसारिक बन्धनोंसे सर्वथा अप्रभावित, जैसे चाहे वैसे, चाहे ऋतम्भरा स्वाद न ले, चाहे आत्माका आनन्द भोगे, कोई बन्धन, रोक-टोक, अडचन उस समय इस को अनुभव नहीं होती।

इस प्रकार वास्तव में जाप अन्त:पुरकी चावी है। मनका ताला इसी चावीसे बन्द हो जाता है। इस से मानस बाह्य सांसारिक स्थूल-सूक्ष्म व्यापार वहीं का वहीं रुक जाता है। आत्मा अत:पुरमें विहार करनेके लिये स्वतन्त्र हो जाता है। सत्य संकल्प, सत्य काम, आत्माराम उसी दशामें आत्मा हो चुका होता है। इस प्रकार जापका फल वर्णन किया गया।

दशमी झांकी।

एक महात्मा से मेरा सम्बन्ध लगभग १॥ वर्ष से चला आ रहा है। मैंने जैसी सेवा उनकी की है, वैसी अन्य किसी जीते महात्मा की आजतक नहीं की। परिणाम इसका स्वाभाविकतया यही होना था, कि वह भी मेरे वशीभूत हुए रहे हैं। उन्होंने भरसक यत्न मुझे लाभ पहुंचाने का किया है। अत: उनके कुछ चमत्कार यहा लेखबद्ध किये जाते हैं। यथा—

(१) हमारे हां एक लडके का विवाह था। लगभग २० दिन पूर्व उसमें निमन्त्रित होकर, वह हमारे यहां आ टिके। शादी से एक दो दिन पूर्व मेरी छोटी लडकी जो लगभग ४ सालकी तब होगी, पेटदर्द आदि से दु:खी हो गई। मैं इतना चिन्तित हुआ कि सोच में पड गया कि बरात में कैसे जा सकूंगा। अत: मैं उन के पास पहुंचा। उन्होंने दो एक दवाईयां बतला दीं। मैंने कहा कि 'मेरी लडकी को भी दवाई ही लेनी पडेगी? वह दवाई तो लेगी नहीं, वैसे ही ठीक कर दीजिये।' अस्तु! परिणाम यह हुआ कि बिना किसी दवाई के ही ठीक हो गई। विवाह लाहौर में ही था। इस लिये वह भी मेरे साथ बरात में जाकर खाती रही, कोई कष्ट उसे नहीं हुआ।

(२) शादी से पांच चार दिन पहिले बडी वर्षा और बादलघटा छाई थी। आधी रात लडके की माताने कहा, कि 'मुझे तो किसी घर के या बाहरके योगीका कुछ लाभ न हुआ। मैंने लडके का विवाह रचाया और वर्षा ईतनी प्रबल आ गई है।' घर का योगी पास सुनता था। एक आध बार वही बात सुनकर बोल उठा, कि 'क्या शादीसे छः मास पूर्व ही विश्व का पानी बन्द कर रक्खोगी?'

जब शादी का समय होगा तो देखना ! ' बात समाप्त हो गई । दो एक दिन पीछे लड़के के उबटना लगना था, तो उस दिन उबटने के समय पानी बन्द रहा । उस से पहिले भी पडा और पीछे भी पडा । उबटना बाहर आंगन में लगाया जा सका । जब बरात चढने का समय आया, तो वर्षा का निशान भी न रहा था और सभी विवाह के दिन वर्षाके बिना ही निकले, यहां तक कि हमें लडकी-वाले ऊपर छत पर खुली धूप में दो पहर का खाना खिलाते रहे । इस सारे में भेद यह था, कि घर के योगी ने बाहर के योगी से वर्षा के विषय में कह दिया था और उन्होंने उत्तर दिया था, कि ' ये (अर्थात् वर्षा और मेघ) अपने आप ही चले जायंगे । ' सो ठीक वैसा ही हुआ । वर्षा और मेघ विवाहसमय अपने आप ही चले गये ।

(३) एक दिन मैं उनके पास गया, तो एक विशेष वार्ता का निश्चय किया । घर आया तो एक छोटीसी चारपाई पर बैठ मैं तनिक ध्यान सा करने लगा, तो हृदय में ओ३म् ओ३म् होने लग कर झूलासा आरम्भ हो गया और तीव्र होता गया । मैंने शीघ्र ही सोचा, कि यह खाट छोटी है, इसलिये मैं सब से बडे पलंग पर बिस्तरे का ही तकिया बना लेटसा गया, पर वह झूला तीव्रतर ही होता गया, यहांतक कि सारा पलङ्ग इतने बलपूर्वक हिलने लगा, कि उसी पर बैठी मेरी बडी भावजजीने भी कहा, कि 'तुम्हारा पलंग बहुत बलपूर्वक हिल रहा है । ' वह बात जिसके लिये यह सब वर्तमान हो रहा था समाप्त होनेपर वह झूला बन्द हो गया, साथ ही पलंग हिलना भी हट गया । अगले दिन स्वामीजी से बतलाया, तो आप बोले, कि ' सब यही महानारायणी शक्ति है । इससे अधिक वेग इसका तुम सहार नहीं सकते थे । '

(४) यह तो बिल्कुल साधारण घटना बन गई है कि स्वामीजी जब चाहे मुझे बुला लेते हैं। क्यों कि अपने घर बैठे ही मैं झूलने लग जाता हूं और तभी समझ जाता हूं, कि स्वामीजी बुला रहे हैं और यदि कोई विशेष अडचन न पडे, तो उन के पास चला भी जाता हूं। ऐसा भी हुआ है, कि उन्होंने मुझे बुलाने का सङ्कल्प किया और मैं अपने घर झूलने लगा, तभी उनके पास कोई और आ बैठा और उन्होंने मेरे विषय में सोचा कि वह अभी न आवे, झट मेरा झूला बन्द हो गया। फिर उन्होंने कुछ चिर पीछे मुझे बुलाने का सङ्कल्प किया फिर मैं जाने लगा फिर कोई उन के पास आ बैठा। फिर उन्होंने चाहा कि मैं अभी न पहुंचूं, मैं फिर ठहर गया। अन्त में जब वह अकेले हो कर मेरी बाट देखने लगे, तो मैं पहुंच ही गया।

(५) एक रात मैं उन के पास लेटा हुआसा था, वह बैठे हुए थे। दूसरी दीवार पर अचानक मुझे स्वामिजी की आकृति ज्योतिर्मयी बनती दिखाई पडी। वह ज्योति कमरे में बिजलीके लैंपकी जो रोशनी दीवार को रोशन कर रही थी, उससे बहुत अधिक प्रकाशमान थी। शोक यह है कि ज्यूंही मुझे विचार आया कि ज्योतिर्मयी आकृति स्वामिजी की दीवार पर बन रही है, तब वह शिरमात्रही बनी, तुरंत लोप हो गई। मुझे बडा पछतावा लगा, कि पूरी क्यों नहीं बन सकी।

(६) स्वामिजी को एक दुकान पर बैठे देख कर मैं अपने रास्ते चला गया। रात को स्वामिजी का स्वप्न ही आ गया। यद्यपि उन दिनों लगभग छः मास से मेरा उन से कुछ मनमुटाव था और मैं उलटा उन से मिलने से कतराता था।

(७) एक दिन उन्हों ने मुझ को बतलाया, कि उन के अमुक

भक्त को ब्रह्मज्योति दिखाई पडी और दूसरे को भी ऐसा तीन चार बार हुआ है। उसी रात तडके पांच बजे जागकर तनिक सोने लगनेपर मुझे बहुत तीव्र तथा प्रबल श्वेत जाज्वल्यमान ज्योति दिखाई पडी, जो एक दो सैकण्ड में ही लोप हो गई। अगले दिन नीला आकाश और एक श्वेत बदली दिखाई पडा, जिसे स्वामिजी निराकार ज्योतिस्वरूप का अंश समझते हैं। कुछ दिन पीछे फिर एक बार यही दृश्य दृष्टिगोचर हुआ।

(८) एक रात अचानक स्वप्न सी जाग्रत दशामें मुझे सामने एकदम झलमल झलमल करता हुआ प्रकाश दृष्टिगोचर हुआ, जिस में कुछही काल में श्वेत बदलियां नीलाकाश में विद्यमान प्रकट हो आईं। ऐसा संपूर्ण आकाश तो नहीं दिखा, केवल उस का थोडासा अंश जितना दृष्टि में एक बार आ सकता है, उतना ही दिखाई पडा था। स्वामिजी को जब इसका वर्णन बताया गया, तो आप बोले कि 'यह ज्योतिःस्वरूप निराकार का दर्शन तुम को हुआ है, जो किसी भाग्यशाली को ही अपने जन्म भर में एक आध बार हो सकता है।'

(९) उपरोक्त वर्णन के पीछे स्वामिजी अपनी बांकी चितवन से बोले, कि 'बस फिर वह बदलियां जुडने लग जाती हैं, तब मेघ जुड कर वर्षा होने लग जाती है, बूंदे गिरने लग जाती हैं, अमृत-वर्षासे तृप्त हो जाता है।' रात को स्वप्न में वही हुआ और मैं उस मेंहसे बचने के लिये छिपता फिरा।

(१०) यह तो बिल्कुल साधारण बात थी, कि जिस दिन स्वामिजी कहते कि कुछ लिख ही लिया करो, तो अगला दिन सारा लिखते ही निकल जाता। जिस दिन कहते कि कुछ कविता ही कर छोडा करो, उससे अगला दिन कविता करते करते ही निकल

जाता और जिस दिन कहते, कि इस में क्या रक्खा है ? तुम जैसे को पुस्तकों से बचना चाहिये, उससे अगले दिन चाहे मैं कितने लेख वा कवितायें घडने का यत्न करता, एक भी न लिखी जाती, सारा दिन निरा निकम्मा ही निकल जाता ।

(११) वह अपने एक भक्तसे एक कपडे सीने की दुकान करवा रहे हैं। सरदी की मौसम आई । वह कहने लगा कि ' अभी तो कुछ काम आने नहीं लगा ।' उन्होंने कहा ' काम का क्या है ? एक सरद हवा चली कि इतना काम आयगा, कि तुम से सम्भाले न सम्भलेगा ।' दो तीन बार ऐसी चर्चा हुई, पर सरद हवा न चली । अन्त में स्वामिजी को मुझ पर सन्देह हुआ, सो उन्होंने मुझसे लडनेका बहाना बनाया । मैं लडकर घर आ गया और उन से एकदम रुष्ट हो गया । मैं विस्मित रह गया, जब कि घण्टे आध घण्टे में ही सरद हवा चलकर बादल हो गए, तब मैंने नाममात्र सा यत्न उन को रोकने का कर के भी देखा, पर वह इतने चढ चुके थे, कि पानी बरस कर ही हटा । बस, फिर क्या था ? काम गरम कपडे की सिलाई का उन के भक्त का बहुत चल निकाला । कई मास फिर स्वामिजी मुझसे बिगडे ही रहे, ताकि उन कपडे सीनेवाले का काम चल निकले और मेरी ओर आकर्षित होने से वह उस की उन्नति में बाधा पडने से बचे रहे । इस प्रकार कई मास ही वह इसी प्रकार रहे । इतने में मैं बहुत ही उन से बिगड बैठा, तब स्यात उन्हें विचार आया या मैं अपनेआप ही उनसे जा मिला और उन से सन्धि कर ली अथवा हो गई ।

कहां तक लिखा जाय ? यह महात्मा तो बहुत चमत्कारी हैं । फिर कभी कुछ और चमत्कार एकत्र हो जाने पर लिखे जायंगे ।

अब उन्हीं ६०-६५ वर्ष के सुन्दर सुडौल गौराङ्ग शाहन्शाह जी का पुण्यवर्णन करता हूं, जिनके विषयमें पहिले कभी लिखा था, कि गुल खेलेंगे तो और भी बहुत कुछ दिखलायंगे।

(?) जब मैं स्वामिजी से रुष्ट हो गया, तो उनकी स्वयं ही रची माया में उलझ कर उन का कट्टर विरोधी हो गया। उनसे वैर ठान बैठा। अतः मैं स्वयं व्याधिग्रस्त हो गया और मुझे खूनी बवासीर का दौरा हो आया। १८ दिन में मध्य में एक आध दिन खून नहीं आया, नहीं तो बराबर प्रत्येक टट्टी में खून प्रायः आता ही रहा। कुछ ही दिनों में मैं घबडा गया, कि स्वामिजीने ही जाल रचा, परन्तु मैं अकडा हुआ था, उन के पास जाने को सर्वथा उद्यत नहीं था, न दवाई करने पर तत्पर था। विचार था, कि परमात्मा स्वयं ही ठीक कर देंगे, कि इतने में सैर करने निकला तो माल पर ही शहन्शाहजी आते मिले। मैं ऐसे समय अपने परिचित महात्माओं के साथ हो लेने से प्रायः रुक ही नहीं सकता। उन के साथ हो लिया, पास ही एक चौबारेमें जा बैठे। उन के बहुत आनन्दाश्रम हैं। लाहौर में बीसियों के घरों में वह जब चाहे जाकर शहन्शाही दरबार लगा लिया करते हैं और कई कई दिन प्रायः सायं दोपर आनन्द मंगलाचार चला करता है।

उस दिन मैं इतना उन के ध्यान में मस्त हुआ, कि पहिले कभी न हुआ था। फिर कई बार गया। स्वामिजी का वर्णन आया तो आप बोले दोष तुम्हारा ही है, उन का नहीं; वह तो तुम्हारे लिए वही हैं, जो तुमने उन्हें बना लिया है। यदि किसी सन्तसाधुसे पेच लडे, तो फिर डोर देते ही जानी चाहिए। केवल तनिक देखना ही चाहा करते हैं। कबीर तो गुरुके पास अपनी स्त्रीतक ले

गया था इत्यादि। कई दिन इसी प्रकार निकल गए पर मेरी बवासीर न हटी।

अन्त में एक दिन मैंने एकांत में समय मांगा तो आप बोले, इस सूरदास को भी साथ ले आना। मैं बोला तो फिर एकांत कैसे रहा! आप हंसकर बोले अच्छा, अकेले ही आ जाना। लारैंसगार्डनमें मैं नियत समय के लगभग जा पहुंचा। कुछ समय प्रतीक्षा करके मैं निराश हो कर लौटने लगा, कि उन की सौम्य मूर्ति दूरसे आती दिखाई पडी। घन्टा भर के लगभग सैर करते रहे और बातें होतीं रहीं। अन्त में निर्णय हुआ कि मुझे Impersonal God पर ही Faith, निराकार भगवान् पर ही श्रद्धा रखनी चाहिए। मानवदेहधारियों पर मेरा भाव जमना कठिन है, अत: मैं किसी के पास न आया जाया करूं। आप बोले अब पक्का रहना। मैं ने कहा जब आप भी कहते हैं तब तो रहूंगा ही। वह बोले नहीं, मेरे कहने से नहीं, अपनी इच्छासे ही। इस प्रकार प्रसन्नता से पृथक् हुए कि अब शहन्शाहजी के पास मैं नहीं आया करूंगा। घर आकर इतना आनन्द आया, कि तनिक प्रश्वास छोडूं, तो मुख प्रसन्न हो जाय। घन्टाभर ऐसा ही रहा। अगले प्रात: उठकर भी वही हुआ, बहुत आनन्द रहा। टट्टी गया तो ख्यून सर्वथा न आया, मैं अतीव विस्मित हुआ। सायं ही दर्बार में जा उपस्थित हुआ और उनके चरणों में सिर रक्खा। जब सब लोग उठकर चले गए, तो आप बोले, 'क्यों भई, वह निर्णय पक्का न रहा?'

मैंने निवेदन किया, महाराज! निर्णय तो पक्काही रहा, पर जब आप इतनी कृपा कर रहे हैं, तो हम कृतघ्नतादोष के भागी क्यों कर बनें? आप की दयाने मुझे यहां आने पर बाधित कर दिया।

वास्तवमें महात्माओं से सङ्ग करनेपर उनकी शक्ति, प्रेम, क्षमा का पता चलता है । कई दिन पीछे दरबार में मैंने यही स्वीकार किया, कि इस प्रकार महाराजने मेरी बवासीर हटायी और वह भी ऐसी कि सब प्रकारका कुपथ्य विवाह में हुआ फिर भी दौरा नहीं पडा । न जाने कितनी शक्ति शहन्शाहजीने किस समय कहां भर दी ।

(२) एक दिन सायं घर में Radio सुनते सुनते मुझे विचार आया, कि शहन्शाहजी दो वर्ष पूर्व सुनना चाहते थे, उन को भी बुला कर सुनाऊं । फिर अपने घरवाले स्यात् ऐसा मानेंगे नहीं, इस विचार के आने से मैं ठिठक गया । अगले दिन दरबार में गया, तो आपने Radio की ही बात चलाई । मैं विस्मित हुआ कि कल सायं यही विचारा था, उसीकी ही ओर इनका संकेत था ।

(३) एक बालक को सूरदास के साथ एक मजलिस में भेजा था । वह नीचे सडक पर पहुंच गए, तो आप चौबारे में बैठे ही मुझे बोले, ये कम्बल उन्हें जल्दी से पकडा आओ, वे टांगा कर रहे हैं । मैंने कहा जी ! वह तो कभी के चले गए। आप बोले, कहा जो तुम्हें उठ खडे हो न ! मैं चला गया, कम्बल पकडाया, तो टांगा चल दिया । ऐसा स्फुट था, कि वह चौबारे में बन्द कमरे में बैठे हैं, पर सडक पर टांगे का प्रबन्ध करती उन की Party उन्हें प्रत्यक्ष दीख रही है । मैं आनन्दित हो गया, कि मुझे स्वयंही उन्हों ने ऐसा चमत्कार दिखाया ।

(४) एक दिन आप बोले, कि हमारी पुस्तक का अनुवाद तुम करते जाना, हमारे मुजरे लगते जायंगे, तुम्हें और तो हमारे पास आना नमस्कार करना आदि कुछ आवश्यक नहीं । साथ

ही साथी वे बोले, कि जो हमने बताना है, वह यह जानता है, पर जो हमने किया है, वह इस ने नहीं किया। घर आकर सोते समय मैं अपनी लडकी को लिखाने लगा तो शहन्शाहजी की ही स्तुतियां लिखवाई गईं हिंदी में भी अंग्रेजी में भी। इतने में परमात्मा स्तुति में अङ्ग्रेजी का काव्य (Poem) भी बन गयां। मैं विस्मित हुआ, क्योंकि यत्न करनेपर भी मैं कविता नहीं कर सका था। अगले दिन भी कविता बनी, उस से अगले दिन भी। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वास्तव में महात्मा पारस होते हैं, इनके सङ्ग से तांबा भी सोना बन जाता है। शहन्शाहजी कवि ठहरे। बिना कविताका वर दिए और और ही बातें करते करते मुझे कवि बना गए। धन्य हैं ऐसे सज्जन जो संसार का उपकार करते फिरते हैं और फिर यही कहते हैं, कि हम ने कुछ नहीं किया, तुम्हारी श्रद्धाका फल तुम्हें मिल गया।

(५) मेरे जैसे सुस्तके अन्दर भी वह इतना प्रेम भर सकते हैं, कि सूर्योदय से १॥ घन्टा पूर्व उठकर उनके दरबार में जा उपस्थित होऊं, यह उन की ही सामर्थ्य नहीं तो मैं कब प्रयत्नशील हो सकता था? लिख अवश्य सकता हूं, पर उस लेखनी पर भी यदि किसी महात्मा का वश चल जाय, तो वह भी बन्द हो जाती है। स्वामिजीसे रुष्ट होनेसे बन्द हुई लेखनी फिर शहन्शाहजीनेही चलाई।

और भी अनेक चमत्कार इनके देखें होंगे। जो अब स्मरण नहीं। आशा है फिर कभी वे और भी बहुत कुछ कृपा करेंगे ही।

एकादशमी झांकी।

लेखकको गत सप्ताह अपने निजी नगर लुधियाने जाना पडा। वहां उसको इस लेखके लिए कईं बातें ज्ञात हुईं। पहिले उन्हींको उद्धृत किया जाता है यथा—

(१) एक सज्जनको स्वप्न आया, कि उनका मृतक ताऊ सम्मुख आन उपस्थित हो गया है। उसने जगनेपर अपने घरवालोंसे कहा, कि आज सुख रहे (तो अच्छा है, ऐसा बुरा स्वप्न आया है) प्रातःकाल तार आ पहुंचा, कि उनका अत्यंत सुयोग्य सर्वप्रिय भतीजा काल-करालका ग्रास बन गया।

इस प्रकार इन्हीं सुयोग्य देवता सरीखे भतीजे के कई संबंधियों को जो कोई कलकत्ते आदि अत्यंत दूर स्थानों में भी थे उनकोभी ऐसे ऐसे भयंकर मृत्युसूचक स्वप्न आये और सब चिन्तित हो गये।

(२) एक सरलहृदया वृद्धाको स्वप्न आया, कि उसके ससुरके भाईका पोता बीमार है और कुलके कई मृतक वृद्ध उसके पास आ खडे हैं, जिनमेंसे उस पौत्रके पिताने अपने वस्त्रमें उसको लपेट कर गांठ बांध ली और शेष वृद्धोंने यह गठरी पीठपर उठवा दी और इस प्रकार उसे ले जाकर सभी चलते बने।

यह स्वप्न उस देवीको रात्री के पूर्वार्द्ध में आया था। उसने अपनी पुत्र वधू से कहा, कि वधू! वह तो मर गया होगा मुझे ऐसा भयंकर स्वप्न आया है। उस वधूने उसको

धीरज बन्धवानेके लिये कहा, कि चिन्ता न करें, भोजन न पचनेसेभी स्वप्न आया ही करते हैं। परन्तु रात्रीके चतुर्थ प्रहर अर्थात् तडके एक दूतने आकर सूचना दी कि वह तो मर गया। इस पर दु:खित वृद्धाको तुरन्त शोक प्रकट करनेके लिये जहां वह उस वृद्धाका भतीजा मरा था वहां जाना पडा।

एक दो मास पीछे फिर उसी वृद्धाको स्वप्न आया, कि उसके जेठकी पुत्रवधू रोगग्रस्त है और उसकी खाटपर उसकी मृतक जेठानी आ बैठी है, मृतक जेठ भी सामने आन खडा है इत्यादि।

उस वृद्धाको शीघ्र ही सूचना मिल गई, कि उक्त पुत्रवधू इस संसारको त्याग स्वर्ग सिधार गई।

(४) उसी सरल हृदया लेखक की ताईजी ने तथा उक्त मृतक वधूके जीवित पतिने एक और बात सुनाई। वह बडी रोचक है सो यहां लिखता हूं, यथा-

(क) ताईजीका लडका सोहनलाल बीमार हो गया। हमारे सिद्ध चचा वहां कोटसे हीरां अचानक आये, तो उसको उन्हें उस हमारे भाईने दिखलाया वह वहीं ठहर गये और उसपर हाथ फेरा और मंत्र पढकर पानी उसको पिलाने के लिये बना दिया जिससे कि वह शीघ्र ही स्वस्थ हो गया।

(ख) चिर पीछे वह फिर बीमार हुआ और मर गया, तो उसकी माता और वह हमारा भ्राता कई बार उस स्थानपर जाया करते रहे जहां उसका शव दबाया हुआ था और जाकर उस समाधिको झाडकर साफ कर दिया

करते थे और हमारी ताईजी बहुत रोया करतीं थीं। वह बतलाती हैं, कि एक दिन जब वे वहां गईं, तो सामने वही लडका खडा दिखाई दिया जिसने दो मालाएं मोतियोंकी उनकी झोलीमें डालकर कहा, कि माता, मैं आपके पास आ जाऊंगा; आप इतना रोया धोया न करें। उन्होंने तबसे रोना धोना बंद किया और उनके यहां फिर पुत्र हुआ जो अब लगभग ३० वर्षका युवा है।

(५) पाठकों को यह जानकर अत्यन्त शोक होगा, कि लेखकसे बडे उनके मंझले भाई जो अतीव सुन्दर, धर्मात्मा, पवित्र, सर्वहितकारी सर्वप्रिय, सिद्धहस्त अध्यापक व्यापारी शासक थे, उनका देहांत २८ फर्वरीको हो गया। उसी दिन दो पहरको उनके जामाताको स्वप्न आया, कि उससे बहुत प्यार करके वह ऊपर आकाशमें उड गये सायंकाल ८ बजकर दस मिनटपर वह वास्तव में उड गये और हम सब को रोता धोता छोड गये। यह घटना यहीं उनकी कोठी पर घटी है।

(६) पू० श्री० १०८ स्वामी अच्युतानंदजी महाराज से मैंने पूछा, कि क्या आपको कभी सच्चा स्वप्न भी कोई आया है, उन्होंने उत्तर दिया हां एक आया था,। वह यह कि मैंने स्वप्नमें हाथीकी सवारी की। प्रातः ऊठकर अपने एक विद्यार्थीसे इसका वर्णन किया। वह कुछ ज्योतिष जानता था, बोला 'महाराज (इसके फलस्वरूप तो) कुछ लक्ष्मीप्राप्ति होनी चाहिए? स्वामीजी ने उसे तो टाल दिया; परंतु शीघ्र ही राजदूत आकर कह गया, कि आप आज यहां भोजन न बनायें, महलों में आपको निमंत्रण है। अस्तु उस दिन

राजभवनमेंही भोजन पाया उन्होंने १००) रुपये स्वामीजीको दक्षिणा में दिये और विद्यार्थियों को सुन्दर वस्त्र प्रदान कर तृप्त किया।

(७) अब दो विचित्र घटना जो स्वप्न नहीं, परंतु रोचक हैं, यहां सत्य होनेके कारण लेखवृद्धयर्थ लिखता हूं। एक भक्त को उसके गुरुने शक्ति प्रदान की।

(क) अगले दिन वह शिष्य उनको मिल कर लौट रहा था, कि सडक पर एक टांगेका घोडा गिर पडा। उस शिष्येने उठो उठो कहा पर वह न उठा, तो उसी आवेशमें उस टांगेको थोडा धक्का लगाया। तुरन्त घोडा उठकर टांगे को खींच ले गया, अच्छा भला स्वस्थ सदृश चल निकला।

(ख) लगभग १५ दिन पीछे एक दिन वही शिष्य ठण्डी सडकपर सैर कर रहा था, कि लाट साहिब की कोठीके पास कुछ प्रतिष्ठित सज्जन खडे थे। उसने भी खडे होकर एक बाईसिकलवालेसे पूछा कि क्या बात है। उत्तर मिला, कि वह घोडी पकडी नहीं जाती। सडक के उस ओर कई साईस उस घोडीको पकडने का यत्न कर रहे थे। एक घोडा भी इसी लिये उन्होंने छोडा हुआ था। उस शिष्य ने उस ओर देखा, कुछ ही क्षणोंमें उस ने कहा "(क्यों जी) अब तो पकडी गयी ना।" बाईसिकलवालेने कहा 'हां' क्योंकि घोडी इतने में पकडी जा चुकी थी! तुरन्त वह शिष्य अपने रास्ते चलता बना।

(८) एक शिष्य अपने गुरुसे बातचीत में मस्त था कि कई घण्टे निकल गए, अन्तमें जब वह जाने लगा तो गुरु बोले "आगे को हम आपको द्वार नहीं खोला करेंगे, चाहे आप

शीतमें बाहर खडे खडे सूखें हम खोलेंगे ही नहीं। " शिष्य ने कहा " तो हम आया ही नहीं करेंगे।" शिष्य घर गया तो उसकी स्त्रीने उसे द्वार ही न खोला। अन्त में कुछ देर शीत में सुकड कर उसने अपनी लडकी से द्वार खुलवाया। इस व्यङ्गसे शिष्य विस्मित तथा प्रसन्न हुआ।

कठिनाई इस गुरुशिष्यसम्बन्ध में यही होती है कि वहां सर्वथा दोनोंके हृदयों को एक होना पडता है। अभेद पूर्णरूपसे होना आवश्यक है तनिक भी मन मुटाव हुआ नहीं कि दोनों दुःखी हुए नहीं। शिष्य को शारीरिक कष्ट और गुरु की आत्मिक अवनति। अथवा पहिला रोगी हो जायगा, दूसरे की प्रसन्नता, ब्रह्मानंद नष्ट हो जायंगे।

अन्त में यह लिखना अनुचित न होगा कि परमात्म शक्ति शरीर की बाह्य जाग्रत अवस्थाओं से परे सर्वथा अदृश्य ही है। उसकी दृष्टिसे देहों का जन्ममरण अति तुच्छ बात है। सरल हृदय उसका क्रीडास्थल है इसी कारण स्वप्नावस्था में साधारण अयोगी भी उसका परिचय पाते हैं और जाग्रत में तो योगीही उसका अनुभव चित्त एकाग्र करके ही पाया करते हैं। वह योगी संकल्पसे भक्त की देहपर मनपर अपना प्रभाव डाल कर उस से उत्तम कार्य भी करवा सकते हैं जो स्यात् वह अकेला स्वप्न में भी न कर सकता।

(९) निराकार शक्ति का एक दृष्टान्त लिख कर बंद करता हूं। वही सोहनलाल का अवतार खराईता राम लगभग तीन वर्षका था कि छतपरसे बाहर गलीमें गिरकर अचेत हो गया। घर वालों को पता भी न लगा। किसी पडौसन ने बाहर काम को जाते हुए देखकर घरवालों का द्वार खुलवाया

तो उन्हों ने उठाया। बहुत इधर उधर भटके पर क्या बनता था! श्वास तथा नाडी चलते थे! दो तीन दिन तो अचेत ही पडा रहा, कुछ खा पी नहीं सकता था; फिर स्वयं ही कुछ कुछ सचेत होने लगा। कितने ही दिन पीछे कुछ खाने पीने लगा। घरवालों ने विवश हो उसे केवल लिटा छोडा। गांव था ऐसे बीमार को क्या दवाई दें। किसी की यह समझ में ही न आया। साधारण पानी दूध कभी कभी देनेका यत्न करते रहे। कई दिवस बीतने पर केवल उस निराकार शक्ति की ही एक मात्र सहायता से वह सर्वथा रोगरहित भला चंगा हो गया। अब लगभग ३५ वर्षका है परमात्मा उसे बहुत दीर्घायु करे।

सो भगवान् की अनन्त निराकार शक्ति के अखूट भण्डारमें सब कुछ है, तभी किसी उर्दू कवि ने कहा है -

उसे फज्ल करते नहीं लगती बार।
न हो उससे मायूस उम्मीदवार॥

अर्थात् अशावादी को परमात्मा की ओरसे कभी सर्वथा निराश नहीं होना चाहिये; क्योंकि उन्हें कृपा करते देर नहीं लगती।

द्वादशमी झांकी।

अब भगवान् के पाठ का फलवर्णन करता हूं। एक दिन दैनिक प्रताप का पुराना कृष्णाङ्क मैं उठाकर पढने लगा। आरम्भ तो एक कहानी से किया था, पर शीघ्र ही कृष्णसम्बन्धि काव्यों में मन उलझ गया। दिन में कितनी ही देर पढता रहा। रातको स्वप्न में एक सुन्दर मोटा मनोहर बालक दिखाई पडा, चित्त प्रसन्न हो गया।

इसी प्रकार मैं उपनिषत् पढा करता था, तो एक दिन एक लंगोटबन्द हृष्ट पुष्ट साधु के दर्शन स्वप्न में हुए, तो निश्चय हो गया, कि यह उपनिषद् में वर्णित महर्षि सयुग्वा रैक्वजी हैं। चित्त प्रसन्न हो गया। एक बार पू० स्वामी सत्यानन्दजी की भक्ति प्रकाश पढा करता था, तो एक रात स्वप्न में बैठकर ध्यान करने लगा, तो किसीने पीठपर थपकी दी तब मुझे निश्चय हो गया कि आज साक्षात् परमात्माने मुझे पीठ पर थपकी दी है। कहने का तात्पर्य यह, कि भगवान् के पाठ करनेवाले को ऐसे स्वप्न अथवा दृष्टान्त बहुधा होते रहते हैं, जिससे उसका मार्ग रोचक बना रहता है, सूखा उजाड बियाबान नहीं प्रतीत होता।

अनन्त में उलझने का एक अति सरल उपाय अब लिखता हूं। मेरे घर के आंगन में एक छोटीसी ढेरी रेतकी है। कभी मेरा ध्यान उसमें चला जाता है, तो उस के अगणित कणों की अनन्तता मेरे मस्तिष्क में खुब जाती है। मैं विस्मित होता हूं, कि कैसे उनमें से प्रत्येक कण में विद्यमान उस के अगणित परमाणुओं में भी एक ही अनन्त भगवान् अखण्ड रूप से ओतप्रोत व्याप रहा

है। वास्तव में बुद्धि इस समस्याको समझ न सकनेसे, पीछे ही लौट पडती है। फिर कच्चे आंगन की मिट्टी के बारीक कण उसे वही प्रश्न पूछते हैं, कि कैसे वह सूक्ष्मातिसूक्ष्म भगवान् हम में से प्रत्येक के अगणित परमाणुओं में अखण्ड रूप से व्याप्त है? वहां से भी परास्त हो बुद्धि ऊपर लटक रही सोमलता (गिलोय) के पत्तोंमें उलझती है। वह भी यही पूछतें हैं कि बतलाओ हम में से प्रत्येक जिन असंख्य कोठडियों के समूह से बना हुआ है, उनमें से प्रत्येक कोठडी के प्रोटोप्लाज्म (जीवित द्रव द्रव्य), न्यूक्लियस (जीवित ठोस गेंद), कोठडी की दीवार, न्यू क्लियोलस (गेंद के अन्दरकी उस से भी अधिक ठोस छोटी गेंद) इत्यादि प्रत्येक विभाग के भी अगणित सूक्ष्म परमाणुओं में वही एक अनन्त अखण्ड कैसे व्याप रहा है। बस यहां से धक्का खाकर वृत्ति उपर आकाश को चढ जाती है। नीले अस्मान का भूमिपर बने मकानों की छत्तों से छू जानेवाला कल्पित किनारा देख पहिचानती है, कि यह रेत, मिट्टी, पत्ते तो क्या वह तो अनन्त अखण्ड धुर आसमान में भी विद्यमान हो रहा है। सूरज चान्द तारे उसी से चमक रहे हैं। मैं तो इस सारे संसार तथा उस अनन्त भगवान् के प्रति अतीव तुच्छ हूं, पर तुरन्त यह भी साथ ही समझे में आ जाता है, कि मैं स्वयं न जाने कितना अनन्त हूं, कि इस अथाह विस्तार को एक उलटे प्याले सा ही देख रहा हूं। ओह! इस सारे अनन्त के सन्मुख मैं स्वयं तो अनन्ततम हूं। मैं ही वास्तव में द्रष्टा रूपसे सम्पूर्ण को निहार रहा हूं। मैं उससे अवश्य अतीव अधिक अनन्त हूं, कि इस झरोखे में बैठा देख रहा हूं और एक क्षण में आंख बन्द कर सम्पूर्ण संसार का प्रवाह अपने पर पडना रोक देता हूं और फिर अपने ही अन्दर सागर अनुभव करता हूं।

इस प्रकार साधारण सी अति तुच्छ सी वस्तु भी अनन्त तक पहुंचाने के लिये " केतु " झण्डी का काम दे सकती है और अनन्त-दर्शन करवा देती है।

अब भिन्न भिन्न समयों पर निर्माण किये गये काव्य आगे लिखे जाते हैं वह भी उपरोक्त विषय को खोलने में सहायक ही होंगे यथा—

ओ३म्।

१

पाठक! पढ़िये पाठ शुभ, ओ३म्कार सुखसार।
पोथी पढ़नी सैंकडों से उत्तम ओ३म्कार॥ १॥

ओ३म्कार भज बावरे, अन्य न ऐसी कार।
ज्यों करना नित ईश का, ध्यान इकरस इकतार॥ २॥

साधक! तप यह साध लो, उत्तम जाप अनाम।
प्रेम भावनासहितही, जपो ओ३म् शुभ नाम॥ ३॥

श्रद्धा से तर जाओगे, तीन लोक त्रय ताप।
भवसागर के पार जा, होवोगे निष्पाप॥ ४॥

२

अन्दर आनन्द उठ रहा, पता नहीं किस स्थान।
है तरङ्ग यह उठ रही, कौन आनन्द-स्थान॥ ५॥

आनन्द तो है आरहा, पर दीखे नहीं स्रोत।
उस अथाह आनन्द का हृदय में जो विद्योत॥ ६॥

३

ओ३म्कार उच्चारना, शांत करे आनन्द।
इसी लिये अनन्दप्रद, जो सुभद्र सुखकन्द॥७॥

की प्राप्ति होती तभी, हो जब न ओ३म्कार ।
जपता जपता ओ३म् को, जब न जपे ओ३म्कार ॥८॥

इस लिये साधो ! चित्तको, करने लिये एकाग्र ।
ही जाप करो आप सब, पर जब हो एकाग्र ॥९॥

चित्त, आप का त्याग दो, तभी सकल पद जाप ।
जाप सभी को त्याग कर, ही होगे निष्पाप ॥१०॥

जब चित्त एकाग्र हो, पर होता हो न जाप ।
आनन्द में हो मगन, तब ब्रह्मस्थ हो आप ॥ ११ ॥

यही परम पद समझिये, विरला बूझे कोय ।
अनुभव कोई ही करे, तत् किरपा यदि होय ॥ १२ ॥

पर यदि दया हो ब्रह्म की, फिर आनन्द ही भोग ।
मग्न हुआ आनन्द में, भोगे आत्म-योग ॥ १३ ॥

आनन्द हो लूट लो, साधो ! मौज बहार ।
आनन्द सर्वस्व है, यही सकल जगसार ॥ १४ ॥

४

ओ३म् विषय लिखने लिये, अन्दर उठी तरङ्ग ।
मन चिन्ता में फंस गया, कैसे लिखूं अभङ्ग ॥ १५ ॥

गहरा उतरा हृदय में, हो प्रफुल्ल तब दोउ ।
ओ३म् विषय लगे समझने, हो प्रसन्न अति दोउ ॥१६॥

लेखनी लिखने लग गई, हस्त की आज्ञा पाय ।
दोहे लिख होने लगे, महिमा ओ३म् रचाय ॥१७॥

शक्ति यही ओजस्विनी, लिखा रही जो गीत ।
मन बुद्धि को एक कर, आत्मिक जगा प्रीत ॥१८॥

ओ३म्कार सर्वेश्वरी, कही ऋषि मुनि सन्त।
नहीं तो मन बुद्धि कभी, हो कब यूं मतिमन्त ॥१९॥

यह अविनाशिनी ज्योत ही, पाओ जान सब कोय।
जीवन सफल हो जाय तब, बूझ सको यदि कोय ॥२०॥

बाहर के हि विषय यूं, करते कभी प्रबुद्ध।
अन्दरकी सभी शक्तियां, कर आत्मा अति शुद्ध ॥२१॥

जैसे ओ३म् इस शब्दने, उतर हृदय के बीच।
मन आत्मा सब कस लिया, अमृत से दिया सींच ॥२२॥

तुरत सभी लिखने लगे, महिमा ओ३म् अपार
दोहे झट बनने लगे, रचना ओ३म् अपार ॥ २३ ॥

कृपा अतः जब ओ३म्की, मानव पर हो जाय।
सभी असम्भव वार्ता, क्षण में सिद्ध हो जाय ॥२४॥

सर्वोत्तम सिद्धी अतः, कृपा ओ३म्कीही मान।
प्रेरण कर सकना इसे, परमज्ञान पहिचान ॥२५॥

नमः उसी ओ३म्कार को, बार बार नमस्कार।
उन के प्रेरक सन्तजन, भी को हो नमस्कार ॥२६॥

५

केवल सत है प्रकृति सत् चित्, जीव-स्वरूप।
परमात्मा आनन्दमय, चेतन सत् शुभरूप ॥२७॥

आनन्दही इस लिये, ईश की निजगुण जान।
अपने ही अन्दर मिले, ब्रह्म उसे पहिचान ॥२८॥

साधो ! आनन्द लूट लो, निजहि आत्मा मांय।
जग सुख जितने हों उन्हें, जान इसी की छांय ॥२९॥

छाया पकडी जाय न, पकडिये जिस की सोय ।
उस छाया कारण परम, ईश की ही वही होय ॥३०॥
भजो अतः जगजीत् की, हीं बुद्धि चित्त लाय ।
वही परम कारण सदा, आनन्द का कहा जाय ॥३१॥
ध्यान करो अत: ईश का, भूल जगत सुखसार ।
यह उत्तम कर्तव्य है, नश्वर जग का सार ॥३२॥
मिल जावे भगवान् जो, जीवन फल लिया पाय ।
नहीं तो विरथाही गया, काल गया सब खाय ॥३३॥
निराकार का ध्यान है, सर्व शक्ति का मूल ।
ऐसा ध्याता कर सके, सङ्कल्प सुखमूल ॥३४॥
उन्नतभी करवा सके, अवतन भी यदि रुष्ट ।
भक्त की अपने उच्च कर, नीच जो शत्रु दुष्ट ॥३५॥
स्वयं उसे इच्छा नहीं, इस जग की रहे कोय ।
भगवान् को चाहता, ही रहता वह होय ॥३६॥
ईश प्यारा परम है, उस के लिये महादेव ।
अन्य पदार्थ की कभूं, नहीं करे वह सेव ॥३७॥
आनन्द ही रच रहा, प्राणि अप्राणि सर्व ।
दुष्टों का रह कर सदा, चूर्ण निरन्तर गर्व ॥ ३८ ॥

६

भगवान् के आनन्द में, लगने लगे जब मन मेरा ।
जब मुखकमल लिखने लगे, आनन्द में भरकर मेरा ।
तब ईश हि होते प्रकट कहते मुनीजन यह मुझे ।
परमात्मा ! आनन्दमय ! दयानंद भी कहते तुझे ॥३९॥

उस समय ही होती तेरी, महती कृपा हे दयानिधे।
हे जगज्जननी ! दुःखहरणी तापत्रयतरणी विधे !
तेरी ही शुश्रूषा करूं, सेवा सदा तेरी करूं।
तेरीही भक्ती धारकर, सब काल तुझ में रमा करूं ॥४०॥

तू ही मेरी माता तू हि, भगिनी पिता भ्राता तूही।
सब बंधु बांधव धर्म के भी, ओ३म्कार मेरे तुह्मीं।
आनन्दय ! सुख सभी को दो, दुःख सभी के दूर कर।
भगवन् यही वर मांगता हूं, दो मुझे यह ही कृपाकर ॥४१॥

दुःखदूर सुख पायें सदा, हों रोग दूर सुस्वस्थ हों।
तव रोष ईश्वर ! दूर हो, सब तापत्रय से मुक्त हों।
अपराध सब के कर क्षमा, मेरी विनय सुन यह प्रभो।
जगदीश ऐसी कर कृपा, हे प्रेमसिंधो ! महाप्रभो ॥४२॥

७

ओ३म्कार उच्चार कर, ही हों कार्य्यारम्भ।
उसी समय ही मान लो, ईशानन्दारम्भ ॥४३॥

मन वाणी के योग से, ओ३म्कार उच्चार।
भावपूर्ण आनंद में, भरकर प्रेम पसार ॥४४॥

आत्मा में परमात्मा, तब अनुभव हो जाय।
एकतार आनंद का, स्रोत उमड तब आय ॥४५॥

अद्भुत शक्ति का पता, तब लग जाय तुरन्त।
वायु से पत्ता हिले, त्यों झूले सानन्द ॥४६॥
९

यह भारी देह भक्त की, वह विस्मित हो जाय ।
शक्ति कौन झुला रही, बूझा यह नहीं जांय ॥४७॥

मुझे प्रभावित कर रही, आत्मा कोई स्वतंत्र ।
यन्त्र बना रही मुझे वह, कर अपने परतंत्र ॥४८॥

कार्य दिव्य उस का कोई, मुझ से है सकता होय ।
इसी लिये मुझे प्रेरती, दिव्य आत्मा सोय ॥४९॥

इस लेखक से लिखा चुकी, वैदिक जन्तु-विज्ञान ।
मानव रोगों का यूंहि, आत्मा एक महान् ॥५०॥

जो उस के इस विषय की, गुरु भूमि पर भी ।
पर देह त्याग आकाश में, रमीं कभी से थी ॥५१॥

स्टीफन्सन करनलजी डी ऐस सी., आई. एम् ।
ऐस. प्रोफैसर ज्वालोजी, कर आकाश में शयन ॥५२॥

मुझ से लिखा चुके हैं वही, उपरोक्त विज्ञान ।
मानव रोग क्रिमियों का, वेदोक्त सुमहान् ॥५३॥

ऐसे ही सुश्रेष्ठ जो, भक्तराज सुकवीर ।
मुझ से लिखाते ही रहे, हैं गीतामृत धीर ॥५४॥

उपनिषदों का सार भी, थे वह लिखाते स्वयं ।
वेदों के किन्हीं सूक्त का, काव्य कराया स्वयं ॥५५॥

ऐसे ही दिव्य आत्मा, मनुज का आश्रय ले ।
कार्य कराती अपने, धैर्य से कर सुस्नेह ॥५६॥

कश्यपजी शिवरामजी, लिखवायेंगे, आप ।
वैदिक वानस्पत्य शुभ, आयुर्वेद वह आप ॥५७॥

वह विज्ञानाचार्य मम, सोम, प्रिय, धृतिधीर ।
वैदिक मैडिकल बोटेनी, बनवायेंगे हो अधीर ॥५८॥

यूं आत्माएं द्यौः की, आकाश की और।
करवाती निज कार्य ही, मनुजों से सब ठौर ॥५९॥

कोई धीर ही बूझता, यह अति गूढ रहस्य ।
संसारी जन जान न, सकें कभी यह रहस्य ॥६०॥

दिव्य ज्योतियें मनुज में, प्रीति यदि करें कोई ।
उस को अपने लोक में, ले जायंगी सोई ॥६१॥

मनुज न फिर इस लोक के, बंधन में कबहूं आय।
कार्य जो उन का पूर्ण कर, वह अमृत हो जाय ॥६२॥

आवागमन से छूट गया, चिरकाल को वीर ।
कर्मयोगी वह विज्ञतम, अमर हुआ वह धीर ॥६३॥

परमात्मा अरु मनुज के, बीच यह दैवीज्योत।
दिव्य आत्मा देवता, ऋग् करता विद्योत ॥६४॥

ओमासश्चर्षणीधृती, विश्वेदेवास आगत ।
दाश्वांसो दाशुषः सुतम् (सर्वे देवास आगत) ॥६५॥

परमात्मा में स्थित सभी, मनुजों को रहीं धार ।
देना चाहती सुत उन्हें, देवताएँ सुखसार ॥६६॥

अतः भजो ओ३म्कार को, देवों का करो काज ।
मनुजो पाओ सुखद सुत, ईश सजाया साज ॥६७॥

नमः दिव्य इन ज्योतियों, को फिर कर नमस्कार ।
ईश सुब्रह्म ओ३म्कारकी, भक्ति करो प्रसार ॥६८॥

८

संकीर्तन ओ३म्कार का, अर्थ भावना साथ ।
अजपाजाप कहा गया, उद्गीथ निष्पाप ॥६९॥

साधो ! सिमरो ओ३म् को, पावन परम सुजाप ।
मन वाणी को सिद्ध कर, हरे आत्म त्रयताप ॥७०॥

यही रचे संसार को, विश्वविधाता ओ३म् ।
रक्षा करे संसार की, जगत्राता हरिओ३म् ॥७१॥

हरे प्रजा के दुःख सब, प्रजापति ओ३म्कार ।
नरनारी को सुखी करे, ओ३म्कार सुखकार ॥७२॥

उत्तम प्यारा नाम यह, भगवान् का जान ।
पुत्र पिता को प्रिय ज्यों, ओ३म् ईश को मान ॥७३॥

कहा व्यास भगवान्ने, शुभ निज शास्त्र मांह ।
ओ३म्कार शुभ सत्य है, सब जग उस की छांह ॥७४॥

भक्त जपे शुभ ओ३म् ही, करे ईश का ध्यान ।
परमोत्तम शुभ कीर्तन, उत्तम जाप सुध्यान ॥७५॥

विधि यही शास्त्रोक्त शुभ. गीता में कही कृष्ण ।
ओ३म्कार आराधना, यही सिखाई कृष्ण ॥७६॥

साधो ! गीता देखलो, बार बार कहा ओ३म् ।
वासुदेव भगवान् शुभ, नाम कृष्ण का ओ३म् ॥७७॥

जपे भावना सहित यह, प्रियनाम ओ३म्कार ।
सिद्धि सकल वह प्राप्त कर, जग में भद्र प्रसार ॥७८॥

जीवन सुख से बिताय कर, द्वार सुषुम्ना खोल ।
ऊर्ध्व गमन कर सूर्य से, ले आनंद अनमोल ॥७९॥

प्राप्त करे भगवान् को, पावे ब्रह्मानंद।
ऋद्धि सिद्धि प्राप्त सब, भोगे मोक्षानंद ॥८०॥

९

शांत एक रस सलिल जो, तत्संज्ञक अप्राण।
जीवन सकल सुव्यक्त का, अव्यक्त सुप्राण ॥८१॥

आत्मावस्था धार कर, ही जीता वही एक।
भिन्न उस से कोई दूसरे, श्रेष्ठ नहीं थे अनेक ॥८२॥

द्वित्त्व भान तब हो नहीं, कल्याणमय शिव।
सूक्ष्म ही इकतार वह, आनन्दमय शिव ॥८३॥

अब भी वहीं विराजता, प्राणि अप्राणि प्राण।
हृदमन्दिर मस्तिष्क को, कर जीवित सप्रमाण ॥८४॥

कारण परमानन्द का, उसे ही मित्र सुजान।
निज सत्ता जीवन उसे, चेतनानन्द पहिचान ॥८५॥